॥ श्रीशङ्कराय नमः ॥







ब्रह्मोत्तरखण्ड भाषाटीका विषयानुक्रमणिका।



अध्याय — विषय



॥ इति ब्रह्मोत्तरखण्डभाषाटीका विषयानुक्रमणिका समाप्ता ॥

श्रीगणेशाय नमः । अथ ब्रह्मोत्तरखण्डप्रारम्भः । दोहा–शिवा सहित शिवपदकमल प्रेम सहित शिरनाय। श्रीब्रह्मोत्तरखंडकी, भाषा लिखत बनाय ॥ १ ॥
ज्योतिर्मात्रस्वरूप निर्मल ज्ञानचक्षु और ब्रह्मस्वरूप शान्त शिवजीकी लिंगमूर्त्तिको प्रणाम करता हूं ॥ १ ॥ ऋषि बूझने लगे । हे सूतजी ! पवित्र और सम्पूर्ण पापोंको नष्ट करनेवाला तुमने विष्णुभगवान्‌का माहात्म्य संक्षेपसे कहा और हमने सुना ॥ २ ॥ इस समय सम्पूर्ण पापोंका नष्ट करनेवाला शिवजीका और उनके भक्तोंका माहात्म्य सुननेकी हमारी इच्छा है ॥ ३ ॥ हे द्विजसत्तम ! उनके मन्त्रोंका माहात्म्य

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॥ श्रीमद्वेङ्कटेशाय नमः ॥ ॥ अथब्रह्मोत्तरखंडप्रारंभः ॥ ज्योतिर्मात्रस्वरूपाय निर्मलज्ञानचक्षुपे ॥ नमः शिवायशांतायब्रह्मणेलिंगमूर्त्तये ॥ १ ॥ ॥ ऋषयऊचुः ॥ ॥ आख्यातंभवतासूतविष्णोर्माहात्म्यमुत्तमम् ॥ समस्तावहरंपुण्यंसमासेन श्रुतंचनः ॥ २ ॥ इदानींश्रोतुमिच्छामोमाहात्म्यंत्रिपुरद्विपः ॥ तद्भक्तानांचमाहात्म्यमशेपाघहरंपरम् ॥ ३ ॥ तन्मंत्राणांचमाहात्म्यंतथैवाद्विजसत्तम ॥ तत्कथायाश्चतद्भक्तेःप्रभावमनुवर्णय ॥ ४ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ एतावदेवमर्त्यानांपरंश्रेयःसनातनम् ॥ यदीश्वरकथायांवैजाताभक्तिरहैतुकी ॥ ५ ॥ अतस्तद्भक्तिलेशस्यमाहात्म्यंवर्ण्यतेमया ॥ अपिकल्पायुपानालंवक्तुंविस्तरतः क्वचित् ॥ ६ ॥ सर्वेपामपिपुण्यानांसर्वेषांश्रेयसामपि ॥ सर्वेषामपियज्ञानांजपयज्ञःपरःस्मृतः ॥ ७ ॥

और उनकी कथा तथा उनकी भक्तिका वर्णन करो ॥ ४ ॥ सूतजी बोले । यही मनुष्योंका सनातन परम कल्याणहै, कि जो ईश्वरकी कथामें विना प्रयोजन भक्ति उत्पन्न हुई है ॥ ५ ॥ इस कारण उनकी भक्तिके लेशमात्रका माहात्म्य वर्णन करताहूं, कारण कि विस्तारपूर्वक वर्णन करनेको तो एक कल्पकी अवस्थासे भी कोई समर्थ नहीहै, अर्थात् एक कल्पमे भी कोई वर्णन नहीं करसकता ॥ ६ ॥ सब पुण्य, सब कल्याण और

सब यज्ञोंमें जप यज्ञ श्रेष्ठ कहा है ॥ ७ ॥ सो सबसे पहिले जपयज्ञके फलदाता शिवजीके षडक्षर मन्त्रको बहुत कल्याण करनेवाला महर्षिलोग कहतेहैं ॥ ८ ॥ जिस प्रकार देवताओंमें शंकर श्रेष्ठ हैं. इसीप्रकार मन्त्रोंमें यह षडक्षर मन्त्र श्रेष्ठहै॥९॥ यह पंचाक्षर मन्त्र जप करनेवालोंको मुक्ति देताहै सिद्धि चाहनेवाले संपूर्ण श्रेष्ठ मुनीश्वर इसका सेवन करतेहैं ॥ १० ॥ इसके अक्षर माहात्म्यका वर्णन करनेको ब्रह्माजी भी समर्थ नहींहैं, श्रुतियें जिस सिद्धान्तमें परम निर्वृत्तिको प्राप्त हुईहैं ॥ ११ ॥ सर्वज्ञ परिपूर्ण, सच्चिदानन्द और सुलक्षण शिवजी भी उस सुन्दर पंचाक्षरमें रमण करते (विराजते) हैं ॥ १२ ॥

तत्रादौजपयज्ञस्यफलंस्वस्त्ययनंमहत् ॥ शैवंषडक्षरंदिव्यंमंत्रमाहुर्महर्षयः ॥८॥ देवानांपरमोदेवोयथावैत्रिपुरांतकः ॥ मंत्राणांपरमो मंत्रस्तथासोऽयंषडक्षरः ॥ ९ ॥ एषपंचाक्षरोमंत्रोजप्तृणांमुक्तिदायकः ॥ संसेव्यतेमुनिश्रेष्ठैरशेषैः सिद्धिकांक्षिभिः ॥ १० ॥ अस्यै वाक्षरमाहात्म्यंनालंवक्तुंचतुर्मुखः ॥ श्रुतयोयत्रसिद्धांतंगताःपरमनिर्वृताः ॥ ११ ॥ सर्वज्ञःपरिपूर्णश्चसच्चिदानंदलक्षणः ॥ सशिवो यत्ररमतेशैवेपंचाक्षरेशुभे ॥ १२ ॥ एतेनमंत्रराजेनसर्वोपनिषदात्मना ॥ लेभिरेमुनयःसर्वेपरंब्रह्मनिरामयम् ॥ १३ ॥ नमस्कारे णजीवत्वंशिवेऽत्रपरमात्मनि ॥ यइत्यैक्यंगतोमंत्रःपरब्रह्ममयोह्यसौ ॥ १४ ॥ भवपाशनिबद्धानांदेहिनांहितकाम्यया ॥ ॐ नमः शिवायेतिमंत्रमाहशिवःस्वयम् ॥ १५ ॥ किंतस्यबहुभिर्मंत्रैःकिंतीर्थैःकिंतपोऽध्वरैः ॥ यस्योंनमःशिवायेतिमंत्रोहृदयगोचरः ॥ १६ ॥

सब उपनिषदोंकी आत्मा इस मन्त्रराजके जप करनेसे सम्पूर्ण मुनि निरामय परब्रह्मको प्राप्त हुए ॥ १३ ॥ परमात्मा शिवजीको प्रणाम करनाही जीवनहै जो यह एकताको प्राप्त हुआ मन्त्र निश्चयपूर्वक परब्रह्ममय है ॥ १४ ॥ संसाररूपी पाशमें बँधेहुए प्राणियोंको हितकी कामनासे उन शिवजीको प्रणामहै (ॐ नमः शिवाय) यह मन्त्र शिवजीने स्वयं कहा है ॥१५॥ ॐ नमः शिवाय यह मन्त्र जिसके हृदयमें स्थितहै. उसको बहुत मन्त्र बहुत तीर्थ

और बहुत यज्ञ करनेसे क्या प्रयोजनहे ॥ १६ ॥ मनुष्य तभी तक इस दुःखसे व्याप्त और दारुण संसारमें भ्रमताहै, जबतक एक बार भी (ॐनमः शिवाय) इसमंत्रका उच्चारण नहीं करता ॥ १७ ॥ यह मंत्रराज सब वेदोंका मुकुटरूपहै, और यही षडक्षरमंत्र सब ज्ञानका निधानहै ॥ १८ ॥ यह कैवल्यमार्गको दीपकरूपहै, और अविद्यारूप सिंधुको वडवानलहै, तथा महापातकोंके निमित्त यही षड क्षरमंत्र दावाग्निरूपहै ॥ १९ ॥ मुक्तिको चाहनेवाले स्त्री, शूद्र तथा अन्य संकीर्ण जातिवाले सब कोई इसको धारण करतेहै. दीक्षा, होमसंस्कार और

तावद्भ्रमंतिसंसारेदारुणेदुःखसंकुले ॥ यावन्नोच्चारयंतीमंमंत्रंदेहभृतःसकृत् ॥ १७ ॥ मंत्राधिराजराजोऽयंसर्ववेदांतशेखरः ॥ सर्वज्ञान निधानंचसोऽयंचैवषडक्षरः ॥ १८ ॥ कैवल्यमार्गदीपोऽयमविद्यासिंधुवाडवः ॥ महापातकदावाग्निःसोऽयंमंत्रःषडक्षरः ॥ १९ ॥ स्त्रीभिःशूद्रैश्चसंकीर्णैर्धार्यतेमुक्तिकांक्षिभिः ॥ नास्यदीक्षानहोमश्चनसंस्कारोनतर्पणम् ॥ २० ॥ नकालोनोपदेशश्चसर्वंशुचिरयंमनुः ॥ महापातकविच्छित्त्यैशिवइत्यक्षरद्वयम् ॥ २१ ॥ अलंनमस्क्रियायुक्तोमुक्तयेपरिकल्पते ॥ उपदिष्टःसद्गुरुणाजप्तःक्षेत्रेचपावने ॥ २२ ॥ सद्योयथेप्सितांसिद्धिंददातीतिकिमद्भुतम् ॥ सद्गुरुंहिसमाश्रित्यग्राह्योऽयंमंत्रनायकः ॥ २३ ॥

तर्पण यह कुछ नहीं कियेजाते ॥ २० ॥ न समयहै, न उपदेशहै क्योंकि यह मंत्र सब प्रकारसे शुद्धहै, महापातकोंको काटनेके निमित्त "शिव" यही दो अक्षर बहुत है ॥ २१ ॥ और नमस्कार करना तो मुक्तिके लिये कल्पना कियाजाताहै, अर्थात् शिवको नमस्कार करनेसे मुक्ति होतीहै. श्रेष्ठ गुरुके द्वारा उपदेश कियाहुआ और पवित्र क्षेत्रमें जपाहुआ ॥ २२ ॥ तत्काल यथेप्सित सिद्धिको देताहै, इससे अधिक और क्या अद्भुत (आश्चर्य) होगा,

श्रेष्ठगुरुको पाकर इस मंत्रनायकका ग्रहण करना चाहिये ॥ २३ ॥ पवित्रक्षेत्रमें जपकरनेसे तत्काल सिद्धि प्राप्त होतीहै, निर्मल, शांत, साधु और थोड़ा बोलनेवाले, इसप्रकार गुरुहों ॥ २४ ॥ काम क्रोधसे रहित सदाचारयुक्त, जितेन्द्रिय इन गुणोंसे युक्त गुरुओंके द्वारा दयापूर्वक दियाहुआ मंत्र शीघ्र सिद्ध होजाताहै ॥ २५ ॥ जपकरनेयोग्य क्षेत्रोंको संक्षेपसे कहताहूं, प्रयाग, पुष्कर, सुन्दर केदार, सेतुबंध ॥ २६ ॥ गोकर्ण, नैमिषारण्य, इन स्थानोंमें जपकरनेसे मनुष्योंको शीघ्र सिद्धि प्राप्त होतीहै, इसविषयमें श्रेष्ठ पुरुषोंने पुरातन इतिहास वर्णन कियाहै ॥ २७ ॥ यह इतिहास अनेक वार अथवा

पुण्यक्षेत्रेषुजप्तव्यःसद्यःसिद्धिंप्रयच्छति ॥ गुरवोनिर्मलाःशांताःसाधवोमितभाषिणः ॥ २४ ॥ कामक्रोधविनिर्मुक्ताःसदाचाराजितेंद्रियाः ॥ एतैःकारुण्यतोदत्तोमंत्रःक्षिप्रंप्रसिध्यति ॥ २५ ॥ क्षेत्राणिजपयोग्यानिसमासात्कथयाम्यहम् ॥ प्रयागंपुष्करंरम्यंकेदारंसेतुबंधनम् ॥ २६ ॥ गोकर्णंनैमिषारण्यंसद्यःसिद्धिकरंनृणाम् ॥ अत्रानुवर्ण्यतेसद्भिरितिहासःपुरातनः ॥ २७ ॥ असकृद्वासकृद्वापिशृण्वतांमंगलप्रदः ॥ मथुरायांयदुश्रेष्ठोदाशार्हइतिविश्रुतः ॥ २८ ॥ बभूवराजामतिमान्महोत्साहोमहाबलः शास्त्रज्ञोनयवाक्शूरोधैर्यवानमितद्युतिः ॥ २९ ॥ अप्रधृष्यःसुगंभीरःसंग्रामेष्वनिवर्त्तितः ॥ महारथोमहेष्वासोनानाशास्त्रार्थकोविदः ॥ ३० ॥ वदान्योरूपसंपन्नोयुवालक्षणसंयुतः ॥ सकाशीराजतनयामुपयेमेवराननाम् ॥ ३१ ॥

एक बार भी सुननेवालोंको मंगलदेताहै, मथुरापुरीमें दाशार्हनामक यदुओंमें श्रेष्ठ॥ २८ बुद्धिमान्, बड़ा पराक्रमी, बलवान्, शास्त्रको जाननेवाला, नीतिमें चतुर, वाक्शूर, धैर्यवान्, बड़ीकान्तिवाला ॥ २९ ॥ अप्रधृष्य. गम्भीर, संग्राममें न लौटनेवाला, महारथी बड़ेधनुषवाला, अनेकशास्त्रोंके अर्थका जाननेवाला ॥ ३० ॥ चतुर, स्वरूपवान्, युवावस्थाके लक्षणोंसे संपन्न राजा विख्यात था, उसने काशीके राजाकी सुन्दरमुखवाली कन्याके साथ

विवाह किया ॥ ३१ ॥ कान्ता, रूपशीलआदि गुणसंपन्न कलावती नामक कन्याके साथ विवाह करके वह राजा अपने मन्दिरमें आया ॥ ३२ ॥
एक समय रात्रिको सोतीहुई अपनी प्यारी भार्याको संगमके निमित्त बुलाया, राजाके बुलाने और बहुत प्रार्थना करनेपर भी ॥ ३३ ॥ उसने न तौ
राजामें मन लगाया और न उसके निकट गई, संगमके निमित्त बुलानेपर जब वह राजाकी वल्लभा न गई ॥ ३४ ॥ तब बलपूर्वक लानेकी इच्छासे
राजा उठा, रानी बोली हे राजन् ! इसमें कारण है मैं व्रतमें स्थितहूं मुझको मत छू मत छू॥ ३५॥ तुम धर्म, अधर्मको जानतेहो, मेरे साथ संगमके निमित्त

कांतांकलावतींनामरूपशीलगुणान्विताम् ॥ कृतोद्वाहःसराजेंद्रःसंप्राप्यनिजमंदिरम् ॥ ३२ ॥ रात्रौतांशयनारूढांसंगमायतदाह्वयत ॥
सास्वभर्त्रासमाहूताबहुशःप्रार्थितासती ॥ ३३॥ नवबंधमनस्तस्मिन्नचागच्छत्तदंतिकम् ॥ संगमाययदाहूतानागतानिजवल्लभा ॥ ३४॥
बलादाहर्तुकामस्तामुदतिष्ठन्महीपतिः ॥ मामास्पृशमहाराजकारणज्ञांव्रतेस्थिताम् ॥ ३५ ॥ धर्माधर्मौविजानासिमाकार्षीःसाहसं
मयि ॥ क्वचित्प्रियेणभुक्तंयद्रोचतेतुमनीपिणाम् ॥ ३६ ॥ दंपत्योःप्रीतियोगेनसंगमःप्रीतिवर्द्धनः ॥ प्रियंयदामेजायेततदासंगस्तुतेमयि
॥ ३७ ॥ काप्रीतिःकिंसुखंपुंसांबलाद्भोगेनयोषितः ॥ अप्रीतांरोगिणींनारीमंतर्वत्नींधृतव्रताम् ॥ ३८ ॥ रजस्वलामकामांचनकामे
तबलात्पुमान् ॥ प्रीणनंलालनंपोषंरंजनंमार्दवंदयाम् ॥ ३९ ॥

साहस मतकरो कारण कि बुद्धिमानोंको वही श्रेष्ठ है कि जो प्रेमपूर्वक संगम हो ॥ ३६ ॥ स्त्री पुरुषकी प्रीतिसे जो संगमहै, वही प्रीतिको बढाताहै,
जब मेरी प्रीतिहो तब मेरे साथ संगम करना ॥ ३७ ॥ स्त्रीको बलपूर्वक भोगनेसे पुरुषोंको क्या प्रीति और सुखहै । अप्रसन्न, रोगिणी, गर्भवती,
व्रतमें स्थित ॥ ३८ ॥ रजस्वला और जिसको कामकी चेष्टा न हो इतनी स्त्रियोंके साथ मनुष्य बलपूर्वक संगम न करे ! प्रीणन, लालन, पोषण,

श्रेष्ठगुरुको पाकर इस मंत्रनायकका ग्रहण करना चाहिये ॥ २३ ॥ पवित्रक्षेत्रमें जपकरनेसे तत्काल सिद्धि प्राप्त होतीहै, निर्मल, शांत, साधु और थोडा
बोलनेवाले, इसप्रकार गुरुहों ॥ २४ ॥ काम क्रोधसे रहित सदाचारयुक्त, जितेन्द्रिय इन गुणोंसे युक्त गुरुओंके द्वारा दयापूर्वक दियाहुआ मंत्र शीघ्र
सिद्ध होजाताहै ॥ २५ ॥ जपकरनेयोग्य क्षेत्रोंको संक्षेपसे कहताहूं, प्रयाग, पुष्कर, सुन्दर केदार, सेतुबंध ॥ २६ ॥ गोकर्ण, नैमिषारण्य, इन स्थानोंमें
जपकरनेसे मनुष्योंको शीघ्र सिद्धि प्राप्त होतीहै, इसविषयमें श्रेष्ठ पुरुषोंने पुरातन इतिहास वर्णन कियाहै ॥ २७ ॥ यह इतिहास अनेक बार अथवा

पुण्यक्षेत्रेषुजप्तव्यःसद्यःसिद्धिंप्रयच्छति ॥ गुरवोनिर्मलाःशांताःसाधवोमितभाषिणः ॥ २४ ॥ कामक्रोधविनिर्मुक्ताःसदाचाराजितें
द्रियाः ॥ एतैःकारुण्यतोदत्तोमंत्रःक्षिप्रंप्रसिध्यति ॥ २५ ॥ क्षेत्राणिजपयोग्यानिसमासात्कथयाम्यहम् ॥ प्रयागंपुष्करंरम्यंकेदारं
सेतुबंधनम् ॥ २६ ॥ गोकर्णंनैमिषारण्यंसद्यःसिद्धिकरंनृणाम् ॥ अत्रानुवर्ण्यतेसद्भिरितिहासःपुरातनः ॥ २७ ॥ असकृद्वासकृद्वा
पिशृण्वतांमंगलप्रदः ॥ मथुरायांयदुश्रेष्ठोदाशार्हइतिविश्रुतः ॥ २८ ॥ बभूवराजामतिमान्महोत्साहोमहाबलः शास्त्रज्ञोनयवाक्शूरोधै
र्यवानमितद्युतिः ॥ २९ ॥ अप्रधृष्यःसुगंभीरःसंग्रामेष्वनिवर्त्तितः ॥ महारथोमहेष्वासोनानाशास्त्रार्थकोविदः ॥ ३० ॥ वदान्योरूपसं
पन्नोयुवालक्षणसंयुतः ॥ सकाशीराजतनयामुपयेमेवराननाम् ॥ ३१ ॥

एक बार भी सुननेवालोंको मंगलदेताहै, मथुरापुरीमें दाशार्हनामक यदुओंमें श्रेष्ठ ॥ २८ बुद्धिमान्, बड़ा पराक्रमी, बलवान्, शास्त्रको जाननेवाला, नीतिमें
चतुर, वाक्शूर, धैर्यवान्, बड़ीकान्तिवाला ॥ २९ ॥ अप्रधृष्य. गम्भीर, संग्राममें न लौटनेवाला, महारथी बड़ेधनुषवाला, अनेकशास्त्रोंके अर्थका
जाननेवाला ॥ ३० ॥ चतुर, स्वरूपवान्, युवावस्थाके लक्षणोंसे संपन्न राजा विख्यात था, उसने काशीके राजाकी सुन्दरमुखवाली कन्याके साथ

विवाह किया ॥ ३१ ॥ कान्ता, रूपशीलआदि गुणसंपन्न कलावती नामक कन्याके साथ विवाह करके वह राजा अपने मन्दिरमें आया ॥ ३२ ॥ एक समय रात्रिको सोतीहुई अपनी प्यारी भार्याको संगमके निमित्त बुलाया, राजाके बुलाने और बहुत प्रार्थना करनेपर भी ॥ ३३ ॥ उसने न तौ राजामें मन लगाया और न उसके निकट गई, संगमके निमित्त बुलानेपर जब वह राजाकी वल्लभा न गई ॥ ३४ ॥ तब बलपूर्वक लानेकी इच्छासे राजा उठा, रानी बोली हे राजन् ! इसमें कारण है मैं व्रतमें स्थितहूं मुझको मत छू मत छू॥ ३५॥ तुम धर्म, अधर्मको जानतेहो, मेरे साथ संगमके निमित्त

कांतांकलावतींनामरूपशीलगुणान्विताम् ॥ कृतोद्वाहःसराजेंद्रःसंप्राप्यनिजमंदिरम् ॥ ३२ ॥ रात्रौतांशयनारूढांसंगमायतदाह्वयत ॥ सास्वभर्त्रासमाहूताबहुशःप्रार्थितासती ॥३३॥ नवबंधमनस्तस्मिन्नचागच्छत्तदंतिकम् ॥ संगमाययदाहूतानागतानिजवल्लभा ॥३४॥ बलादाहर्तुकामस्तामुदतिष्ठन्महीपतिः ॥ मामास्पृशमहाराजकारणज्ञांव्रतेस्थिताम् ॥ ३५ ॥ धर्माधर्मौविजानासिमाकार्षीःसाहसं मयि ॥ क्वचित्प्रियेणभुक्तंयद्रोचतेतुमनीषिणाम् ॥ ३६ ॥ दंपत्योःप्रीतियोगेनसंगमःप्रीतिवर्द्धनः ॥ प्रियंयदामेजायेततदासंगस्तुतेमयि ॥ ३७ ॥ काप्रीतिःकिंसुखंपुंसांबलाद्भोगेनयोषितः ॥ अप्रीतांरोगिणींनारीमंतर्वत्नींधृतव्रताम् ॥ ३८ ॥ रजस्वलामकामांचनकामे तबलात्पुमान् ॥ प्रीणनंलालनंपोषंरंजनंमार्दवंदयाम् ॥ ३९ ॥

साहस मतकरो कारण कि बुद्धिमानोंको वही श्रेष्ठ है कि जो प्रेमपूर्वक संगम हो ॥ ३६ ॥ स्त्री पुरुषकी प्रीतिसे जो संगमहै, वही प्रीतिको बढातहै, जब मेरी प्रीतिहो तब मेरे साथ संगम करना ॥ ३७ ॥ स्त्रीको बलपूर्वक भोगनेसे पुरुषोंको क्या प्रीति और सुखहै । अप्रसन्न, रोगिणी, गर्भवती, व्रतमें स्थित ॥ ३८ ॥ रजस्वला और जिसको कामकी चेष्टा न हो इतनी स्त्रियोंके साथ मनुष्य बलपूर्वक संगम न करे ! प्रीणन, लालन, पोषण,

रंजन, सीधापन और दयासे ॥३९॥ युवतीभार्याके साथ प्रेम करनेवाला पति संगम करे, इसप्रकार रति न चाहनेवाली व्रतमें स्थित में इच्छा न करना
चाहिये इस प्रकार रानीके कहनेपर भी कामसे व्याकुल हुए उस राजाने बलपूर्वक रानीका हाथ पकडकर आलिङ्गन करलिया ॥४०॥४१॥ किन्तु
स्पर्शकरते ही रानीका शरीर तप्त लोहापिंडसागरमें विदित हुआ, और स्पर्श करनेसे जब अपना शरीर जलने लगा, तब भयसे व्याकुल होकर रानीको
छोडदिया ॥ ४२ ॥ राजा बोला, हे प्रिये ! अहो बडा आश्चर्य है मैने तुममें देखा कि कमलके समान कोमल तुम्हारा शरीर अग्निके समान किस
प्रकार होगया ॥ ४३ ॥ इस प्रकार विस्मित हुआ राजा भय करनेलगा, तब हँसकर नीतिपूर्वक विनयसे हाथजोडकर वह राजवल्लभा राजासे बोली
॥ ४४ ॥ रानी बोली, हे राजन् ! पहिले बालकपनमें मुनिश्रेष्ठ दुर्वासा ऋषिने मेरे ऊपर दयाकरके शिवजीकी पंचाक्षरी विद्याका मुझको उपदेश
दियाथा ॥ ४५ ॥ उस पंचाक्षर मंत्रके प्रभावसे मेरा शरीर निष्पाप होगयाहै, इसकारण दैववर्जित अर्थात् मंत्रहीन और पापी पुरुष मेरा स्पर्श नहीं कर

कृत्वावधूमुपगमेद्युवतींप्रेमवान्पतिः ॥ युवतौकुसुमेचैवविधेयंसुखमिच्छता ॥ ४० ॥ इत्युक्तोऽपितयासाध्व्यासराजास्मरविह्वलः ॥
बलादाकृष्यतांहस्तेपरिरेभेरिरंसया ॥४१॥ तांस्पृष्टमात्रांसहसातप्तायःपिंडसन्निभाम् ॥ निर्दहंतीमिवात्मानंतत्याजभयविह्वलः॥४२॥
॥ राजोवाच ॥ ॥ अहोसुमहदाश्चर्यमिदंदृष्टंतवप्रिये ॥ कथमग्निसमंजातंवपुःपल्लवकोमलम् ॥ ४३ ॥इत्थंसुविस्मितोराजाभी
तःसाराजवल्लभा ॥ प्रत्युवाचविहस्यैनंविनयेनशुचिस्मिता ॥ ४४ ॥ ॥ राज्ञ्युवाच ॥ ॥ राजन्ममपुराबाल्येदुर्वासामुनिपुंगवः ॥
शैवींपंचाक्षरींविद्यांकारुण्येनोपादिष्टवान् ॥४५॥ तेनमंत्रानुभावेनममांगंकलुषोज्झितम् ॥ स्प्रष्टुंनशक्यतेपुंभिःसपापैर्दैववर्जितैः ॥४६॥

सकते ॥ ४६ ॥ तुम भी रजोगुणयुक्त हो और कुलटा तथा वेश्याओंके साथ गमन करतेहो, मदिरापान करतेहो ॥ ४७ ॥ स्नान नही करते, संध्या, तथा पवित्र मंत्रका जप नही करते और शिवजीकी आराधना नहीं करते, फिर किसप्रकार मेरा स्पर्श करसकतेहो ॥ ४८ ॥ राजा बोला कि हे सुश्रोणि ! हे प्रिये ! उस पंचाक्षरी विद्याका मुझको भी उपदेश कर जिससे निष्पाप होकर तुम्हारे साथ प्रीतिकी इच्छा करताहूँ॥ ४९॥ यह सुनकर रानी बोली आप गुरुहैं इसलिये मैं आपको उपदेश नहीं करसकती अपने कुलगुरु मंत्रोंको जाननेवाले गर्गमुनिसे मन्त्रोपदेश लेनेके निमित्त जाओ ॥ ५० ॥

त्वयाराजप्रकृतिनाकुलटागणिकादयः ॥ मदिरास्वादनिरतानिषेव्यंतेसदास्त्रियः ॥ ४७ ॥ नस्नानंक्रियतेनित्यंनमंत्रोजप्यतेशुचिः ॥ नाराध्यतेत्वयेशानःकथंमांस्प्रष्टुमर्हसि ॥ ४८ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ तांसमाख्याहिसुश्रोणिशैवींपंचाक्षरींशुभाम् ॥ विद्याविध्वस्तपापोऽहंत्वयीच्छामिरतिंप्रिये ॥ ४९ ॥ ॥ राज्ञ्युवाच ॥ ॥ नाहंतवोपदेशंवैकुर्यांममगुरुर्भवान् ॥ उपातिष्ठगुरुंराजन्गर्गंमंत्रविदांवरम् ॥ ॥ ५० ॥ सूतउवाच ॥ ॥ इतिसंभाष्यमाणौतौदंपतीगर्गसन्निधिम् ॥ प्राप्यतच्चरणौमूर्ध्नाववंदातेकृतांजली ॥ ५१ ॥ अथराजागुरुं प्रीतमभिपूज्यपुनःपुनः ॥ समाचष्टविनीतात्मारहस्यात्ममनोरथम् ॥ ५२ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ कृतार्थंमांकुरुगुरोसंप्राप्तं करुणार्द्रधीः ॥ शैवींपंचाक्षरींविद्यामुपदेष्टुंत्वमर्हसि ॥ ५३ ॥

सूतजी ऋषियोंसे कहनेलगे कि इस प्रकार कहकर वे दोनों गर्गमुनिके पास गये और जाकर दोनोंने हाथ जोड़ और शिर झुकाकर उनके चरणोंमे प्रणाम किया ॥ ५१ ॥ और प्रसन्नतासे बारंबार प्रणाम करके पूजन करके नम्रभावसे एकान्तमें अपने मनोरथको कहा ॥ ५२ ॥ राजा बोला कि हे गुरो ! करुणापूर्वक प्राप्त हुए मुझको कृतार्थ करो, शिवजीकी पंचाक्षरी विद्याका उपदेश करनेको तुम समर्थ हो ॥ ५३ ॥

रजोगुणसे अज्ञान वा ज्ञानसे किया हुआ जो कुछहै वह सब पाप जिससे नष्ट होजाय इस प्रकारका उपदेश मुझको दो ॥५४॥ इस प्रकार राजाकी विनती सुनकर ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ गर्गमुनि उन दोनों (राजारानी) को कालिन्दी (यमुना) नदीके पवित्र तटपर लेगये ॥ ५५ ॥ वहां पवित्र वृक्षकी जडमें गुरुजी स्वयं बैठगये. पवित्र तीर्थके जलमें स्नान कराकर राजाको व्रत कराया ॥ ५६ ॥ पूर्वाभिमुख होकर बैठै और शिवजीके चरणकमलोंको प्रणाम किया.

अनाज्ञातंयदाज्ञातंयत्कृतंराजकर्मणा ॥ तत्पापंयेनशुद्ध्येतितन्मंत्रंदेहिमेगुरो ॥ ५४ ॥ एवमभ्यर्थितोराज्ञागर्गोब्राह्मणपुंगवः ॥ तौनिनायमहापुण्यंकालिंद्यास्तटमुत्तमम् ॥ ५५ ॥ तत्रपुण्यतरोर्मूलेनिषण्णोऽथगुरुःस्वयम् ॥ पुण्यतीर्थजलेस्नातंराजानंसमुपोषितम् ॥ ५६ ॥ प्राङ्मुखंचोपवेश्याथनत्वाशिवपदांबुजम् ॥ तन्मस्तकेकरंन्यस्यददौमंत्रंशिवात्मकम् ॥ ५७ ॥ तन्मंत्रधारणादेवतन्मुनेर्हस्तसंगमात् ॥ निर्ययुस्तस्यवपुषोवायसाःशतकोटयः ॥ ५८ ॥ तेदग्धपक्षाःक्रोशंतोनिपतंतोमहीतले ॥ भस्मीभूतास्ततःसर्वेदृश्यंतेस्मसहस्रशः ॥ ५९ ॥ दृष्ट्वातद्वायसकुलंदह्यमानंसुविस्मितौ ॥ राजाचराजमहिषीतंगुरुंपर्यपृच्छताम् ॥ ६० ॥

फिर उस राजाके मस्तकपर हाथ रखकर शिवजीके पंचाक्षर मन्त्रका उपदेश दिया ॥ ५७ ॥ मन्त्र और गुरुजीके हाथ रखनेके प्रभावसे राजाके शरीर मेंसे करोड़ों वायस (कौए) निकले॥५८॥दग्ध हैं पंख जिनके ऐसे वे काग शब्द करते हुए पृथ्वीपर गिरनेलगे और गिर गिर कर हजारों भस्मीभूत होनेलगे ॥ ५९ ॥ उन इसप्रकार निकलकर भस्म होतेहुए अनेक वायसोंको देखकर वे दोनों आश्चर्य करनेलगे, तव राजारानीने गुरुजीसे बूझा ॥६०॥

गुरुजी बोले, कि, हे राजन् ! तुमने सहस्रों जन्मोंमें अनेक पाप संचित कियेहैं ॥ ६१ ॥ उन सहस्रों-जन्मोंमें कुछ पुण्य भी किये हैं, उन पुण्योंके अधिक होनेसे तुम्हारा उत्तम कुलमें जन्म हुआहै ॥ ६२ ॥ पाप अधिक होनेसे मनुष्य नीच योनियोंमें जन्म लेताहै, और पाप पुण्य बराबर किये हों तो साधारण मनुष्यजन्मकी प्राप्ति होतीहै ॥ ६३ ॥ जिस समय शिवजीका पंचाक्षर मन्त्र तुम्हारे हृदयमें गया, तभी तुम्हारे करोड़ों पाप काकरूप होकर

॥ गुरुरुवाच ॥ ॥ राजन्भवसहस्रेषुभवतापरिधावता ॥ संचितानिदुरन्तानि संतिपापान्यनेकशः ॥ ६१ ॥ तेषुजन्मसहस्रेषुया
निपुण्यानिसंतिते ॥ तेषामाधिक्यतःक्वापिजायतेपुण्ययोनिषु ॥ ६२ ॥ तथापापीयसींयोनिंक्वचित्पापेनगच्छति ॥ साम्येपुण्या
न्ययोश्चैवमानुषींयोनिमाप्तवान् ॥ ६३ ॥ शैवीपंचाक्षरीविद्याप्रदातेहृदयंगता ॥ अघानांकोटयस्त्वत्तःकाकरूपेणनिर्गताः ॥ ६४ ॥
कोटयोब्रह्महत्यानामगम्यागम्यकोटयः ॥ भवकोटिसहस्रेषुयेऽन्येपातकराशयः ॥ ६५ ॥ क्षणाद्भस्मीभवंत्येवशैवेपंचाक्षरेधृते ॥ आसं
स्तवाद्यराजेंद्रदग्धाःपातककोटयः ॥ ६६ ॥ अनयासहपूतात्माविहरस्वयथासुखम् ॥ इत्याभाष्यमुनिश्रेष्ठस्तंमंत्रमुपदिश्यच ॥ ६७ ॥
ताभ्यांविस्मितचित्ताभ्यांसहितःस्वगृहंययौ ॥ गुरुवर्यमनुज्ञाप्यमुदितौतौचदंपती ॥ ६८ ॥

तुम्हारे शरीरसे निकल गये ॥ ६४ ॥ करोड़ों ब्रह्महत्या, अगम्यागमन और करोड़ों जन्मोंमें अन्य जो पाप कियेहैं वे ॥ ६५ ॥ शिवजीका पंचाक्षर मन्त्र धारण करनेसे निःसंदेह क्षणमात्रमें भस्मीभत होजाते हैं, हे राजेन्द्र ! तुम्हारे पापसमूह दग्ध होगये॥ ६६ ॥ अब अपनी इस प्यारी भार्याके साथ सुखपूर्वक विहार करो. इसप्रकार कह और मन्त्रका उपदेश देकर ॥ ६७ ॥ विस्मित चित्तवाले उन दोनोंके साथ मुनिश्रेष्ठ गर्गमुनि अपने घर आये,

फिर गुरुजीकी आज्ञासे प्रसन्न हुए वे दोनों ॥ ६८ ॥ अपने घर आकर महाकान्तिवाले वे दोनों सुखपूर्वक विहार करनेलगे, चन्दनके समान शीतल अपनी पत्नीको आलिंगन करके इसप्रकार राजा परम सन्तुष्ट हुआ, जैसे कोई अपनी निधिको पाकर सन्तुष्ट हो ॥ ६९ ॥ इतनी कथा सुनाय सूतजी ऋषियोंसे कहने लगे. कि संपूर्ण वेद, उपनिषद, पुराण, शास्त्रोंका शिरोमणि, सम्पूर्ण पापोंको नष्ट करनेवाला यह शिवजीके पंचाक्षर मन्त्रका प्रभाव तुम्हारे प्रति संक्षेपसे कथन किया कारण कि विस्तारसे कहां तक कहसकतेहैं ॥ ७० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां

ततःस्वभवनंप्राप्यरेजतुःस्ममहाद्युती ॥ राजाहृष्टःसमाश्लिष्यपत्नींचंदनशीतलाम् ॥ संतोषंपरमंलेभेनिःस्वःप्राप्ययथाधनम् ॥ ६९ ॥ अशेषवेदोपनिषत्पुराणशास्त्रावतंसोऽयमघांतकारी ॥ पंचाक्षरस्यैवमहाप्रभावोमयासमासात्कथितोवरिष्ठः ॥ ७० ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडेपंचाक्षरवर्णनंनामप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ अथान्यदपिवक्ष्यामिमाहात्म्यंत्रिपुरद्विषः ॥ श्रुतमात्रे णयेनाशुच्छिद्यंतेसर्वसंशयाः ॥ १ ॥ अतःपरतरंनास्तिकिंचित्पापविशोधनम् ॥ सर्वानंदकरंश्रीमत्सर्वकामार्थसाधनम् ॥ २ ॥ दीर्घायुर्विजयारोग्यभुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ यदनन्येनभावेनमहेशाराधनंपरम् ॥ ३ ॥

पंचाक्षरप्रभाववर्णनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ अथ द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ सूतजी बोले । हे ऋषियो ! एक और त्रिपुरदैत्यको मारनेवाले शिवजी का माहात्म्य वर्णन करताहूं, जिसके सुननेमात्रसे शीघ्रही सब सन्देह नष्ट होजातेहैं ॥ १ ॥ इससे अधिक पापको नष्ट करनेवाला सर्वानन्दकरनेवाला, संपूर्ण कामनाओंको सिद्ध करनेवाला ॥ २ ॥ दीर्घायु, विजय, आरोग्यता और भुक्तिमुक्तिके फलको देनेवाला और कोई प्रायश्चित्त नहींहै, जिसप्र

कार अनन्यभावसे शिवजीका आराधन है ॥ ३ ॥ आर्द्र, शुष्क, अल्प और बड़ोंके निमित्त भी यही प्रायश्चित्त है. इससे अधिक कुछ नहीहै ॥ ४ ॥ जो पाप कभी नष्ट नहीं होते ऐसे भयके देनेवाले पापोंका प्रायश्चित्त जाननेवाले महामुनियोंने प्रायश्चित्त निर्दिष्ट कियाहै ॥ ५ ॥ यही परम कल्याण कारी है, कि जो भक्तिपूर्वक परमेश्वर शिवदेवका पूजन कियाजाय ॥ ६ ॥ जाने, विनाजाने, जिस किसी हेतुसे जो कुछ शिवजीके निमित्त कियाहै, वह सब परम फल अर्थात् मुक्ति देताहै ॥ ७ ॥ माघमासके कृष्णपक्षकी चतुर्दशीको उपवास करना दुर्लभहै, उपवास होजाय तौ रात्रिको जागरण

आर्द्राणामपिशुष्काणामल्पानांमहतामपि ॥ एतदेवविनिर्दिष्टंप्रायश्चित्तमथोत्तमम् ॥ ४ ॥ सर्वकालेऽप्यभेद्यानामघानांभयकारणम् ॥ महामुनिविनिर्दिष्टैःप्रायश्चित्तैरथोत्तमैः ॥ ५ ॥ इदमेवपरंश्रेयःसर्वशास्त्रविनिश्चितम् ॥ यद्भक्त्यापरमेशस्यपूजनंपरमोदयम् ॥ ६ ॥ जानताजानतावापियेनकेनापिहेतुना ॥ यत्किंचिदपिदेवायकृतंकर्मविमुक्तिदम् ॥ ७ ॥ माघेकृष्णचतुर्दश्यामुपवासोऽतिदुर्लभः ॥ तत्रापिदुर्लभंमन्येरात्रौजागरणंनृणाम् ॥ ८ ॥ अतीवदुर्लभंमन्येशिवलिंगस्यदर्शनम् ॥ सुदुर्लभतरंमन्येपूजनंपरमेशितुः ॥ ९ ॥ भवकोटिशतोत्पन्नपुण्यराशिविपाकतः ॥ लभ्यतेवापुनस्तत्रविल्वपत्रार्चनंविभोः ॥ १० ॥ वर्षाणामयुतंयेनस्नातंगंगासरिज्जले ॥ सकृद्विल्वार्चनेनैवतत्फलंलभतेनरः ॥ ११ ॥

करना दुर्लभहै ॥ ८ ॥ जागरण होजाय तो शिवजीके लिंगका दर्शन तो वहुत ही दुर्लभ मानताहूं, फिर शिवजीका पूजन करना तो वहुत ही दुर्लभहै ॥ ९ ॥ अनेक जन्मोंसे सञ्चित किये करोड़ों और सैंकड़ों पुण्योंके उदयसे विल्वपत्रके द्वारा शिवजीका पूजन प्राप्त होताहै ॥ १० ॥ कारण कि दश हजार वर्षपर्यन्त गंगाजीके जलमें स्नान करनेसे जो फल प्राप्त होताहै, वह शिवजीकी एक विल्वपत्रमात्रसे पूजा करनेसे प्राप्त होजाताहै॥ ११ ॥

प्रत्येकयुगमें जो पुण्य होतेहैं, वे सब इस शिवरात्रिमें स्थितहैं ॥१२॥ ब्रह्मादिदेवता और वशिष्ठ आदि मुनि संसारमें इसी माघमासके कृष्णपक्षकी चतुर्द
शीकी प्रशंसा करतेहैं ॥ १३ ॥ इस दिन उपवास करनेसे अनन्त यज्ञोंका फल प्राप्त होताहै, और रात्रिमें जागरण करनेसे करोड़ों तपोंका पुण्य प्राप्त
होताहै ॥ १४ ॥ एक बिल्वपत्रसे शिवजीका पूजन करनेसे जो फल मिलताहै, त्रिलोकीमें उस पुण्यकी कोई समानता नहीं करसकता ॥ १५ ॥ इस
प्रकार कहकर सूतजी शौनकादिक ऋषियोंसे कहनेलगे कि इसविषयमें सुन्दर और पुण्यको बढानेवाली एक कथाको कहताहूं, जो कि गुप्त भी थी

यानियानितुपुण्यानिलीनानीहयुगेयुगे ॥ माघेसितचतुर्दश्यांतानितिष्ठंतिकृत्स्नशः ॥ १२ ॥ एतामेवप्रशंसंतिलोकेब्रह्मादयःसुराः ॥
मुनयश्चवशिष्ठाद्यामाघेऽसितचतुर्दशीम् ॥ १३ ॥ अत्रोपवासःकेनापिकृतःक्रतुशताधिकः ॥ रात्रौजागरणंपुण्यंकल्पकोटितपोऽ
धिकम् ॥ १४ ॥ एकेनबिल्वपत्रेणशिवलिंगार्चनंकृतम् ॥ त्रैलोक्यस्यतुपुण्यस्यकोवासादृश्यमिच्छति ॥ १५ ॥ अत्रानुवर्ण्यतेगाथा
पुण्यापरमशोभना ॥ गोपनीयापिकारुण्याद्गौतमेनप्रकाशिता ॥ १६ ॥ इक्ष्वाकुवंशजःश्रीमान्राजापरमधार्मिकः ॥ आसीन्मित्रसहो
नामश्रेष्ठःसर्वधनुर्भृताम् ॥ १७ ॥ सराजासकलास्त्रज्ञःशास्त्रज्ञःश्रुतिपारगः ॥ वीरोऽत्यंतबलोत्साहोनित्योद्योगीदयानिधिः ॥ १८ ॥
पुण्यानामिवसंघातस्तेजसामिवपंजरः ॥ आश्चर्याणामिवक्षेत्रंयस्यमूर्तिर्विराजते ॥ १९ ॥

तो भी करुणा करके गौतमऋषिने प्रकाश की है॥ १६ ॥इक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न, श्रीमान्, परमधार्मिक, सम्पूर्ण धनुर्विद्या जाननेवालोंमें श्रेष्ठ मित्रसहनामक
एक राजा था॥ १७ ॥ वह राजा सब अस्त्रविद्यामें निपुण, शास्त्रको जाननेवाला, वेदार्थका जाननेवाला, वीर, अत्यन्त बली और उत्साही, सदा उद्योग
करनेवाला और अत्यन्त दयालु था॥ १८॥अनेक पुण्योंका मानों पुञ्ज, अनेक तेजोंका समूह और अनेक आश्चर्योंका स्थान, इस प्रकारका शरीर था ॥१९॥

हृदय उसका दयासे पूर्ण था, शरीर उसका श्रीसे शोभित था, और चरण जिसके अनेक राजाओंके शीश मुकुटोंसे शोभित थे ॥ २० ॥ एक समय वह राजा आखेट (शिकार) को गया और बडा बलवान् वह राजा बडी गहरी एक गुफामें घुसा ॥ २१ ॥ उसगुफामें अनेक सिंह, गवय, मृग, रुरुमृग,वराह, महिष थे और बहुतसे मृगेन्द्रोंको उसने बाणोंसे वध किया॥ २२॥और आखेटमें आसक्त हुए उस राजाने बडे दाँतवाले और अग्निके समान आकारवाले फिरते हुए किंसी एक निशाचरको मारा ॥ २३ ॥ तब उसका भाई जो दूर था शोकसे व्याकुल अतिक्रोधसे भाईको मराहुआ देखकर

हृदयंदययाक्रांतंश्रियाक्रांतंचतद्वपुः ॥ चरणौयस्यसामंतचूडामणिमरीचिभिः ॥ २० ॥ एकदामृगयाकेलिलोलुपःसमहीपतिः ॥ विवेशगह्वरंघोरंबलेनमहताघृतः २१ ॥ तत्रविव्याधविशिखैःशार्दूलान्गवयान्मृगान् ॥ रुरून्वराहान्महिषान्मृगेंद्रानपिभूरिशः ॥ २२ ॥ सरथीमृगयासक्तोगहनंदंशितश्चरन् ॥ कमपिज्वलनाकारंनिजघाननिशाचरम् ॥ २३ ॥ तस्यानुजःशुचाविष्टोहृष्ट्वादूरेतिरोहितः ॥ भ्रातरंनिहतंदृष्ट्वाचिंतयामासचेतसा ॥ २४ ॥ नन्वेषराजादुर्द्धर्षंदेवानांरक्षसामपि ॥ छद्मनैवप्रजेतव्योममशत्रुर्नचान्यथा ॥ २५ ॥ इतिव्यवसितःपापोराक्षसोमनुजाकृतिः ॥ आससादनृपश्रेष्ठमुत्पातइवमूर्तिमान् ॥ २६ ॥ तंविनम्राकृतिंदृष्ट्वाभृत्यतांकर्तुमागतम् ॥ चक्रेमहानसाध्यक्षमज्ञानात्समहीपतिः ॥ २७ ॥

चित्तमें विचारने लगा कि ॥ २४ ॥ इसको देवता और राक्षस भी नहीं जीतसकते इसकारण इसको छलसे जीतना चाहिये और किसीप्रकारसे नही. जीतसकूंगा इससे अवश्य बदलालूंगा क्योंकि यह मेरा शत्रुहै ॥ २५ ॥ इसप्रकार मनमें विचारकर उसपापरूप राक्षसने मनुष्यशरीर धारण किया. और उत्पातकी मूर्ति धारण करके राजाके सन्मुख आकर प्रणाम किया ॥ २६ ॥ नौकरीके निमित्त आये हुए और नम्र हुए उस मनुष्याकार राक्षसको

देख राजाने अज्ञानसे अर्थात् विना जानेही भोजनशालाका अध्यक्ष बनालिया ॥ २७ ॥ फिर उस वनमें कुछ काल राजा पर्यटनकर आखेट पूर्ण होनेपर अपनी पुरीमें आया ॥२८॥उस मुख्यराजेन्द्रकी मदयन्तीनाम रानी थी, जिसप्रकार नलको दमयन्ती प्यारी थी इसीप्रकार उसको भी अपनी स्त्री प्यारी थी ॥ २९ ॥एक समय जब उसके पिताके श्राद्धका दिवस आया तब राजाने मुनिश्रेष्ठ वशिष्ठजीको निमंत्रण दिया और अपने घरमें बुलाया ॥ ३० ॥ तथा अनेकप्रकारके भोजन मुनिको परोसे उस राक्षसने भी समय पाकर कपटसे शाकमें मनुष्यका मांस मिलाकर मुनिके आगे परसदिया !

अथतस्मिन्वनेराजार्किंचित्कालंविहृत्यसः ॥ निवृत्तोमृगयांहित्वास्वपुरींपुनराययौ ॥ २८॥ तस्यराजेंद्रमुख्यस्यमदयंतीति नामतः ॥ दमयंतीनलस्येवविदितावल्लभासती ॥ २९ ॥ ततोऽस्मिन्समयेराजानिमंत्र्यमुनिपुंगवम् ॥ वशिष्ठंगृहमानिन्येसंप्राप्ते पितृवासरे ॥ ३० ॥ रक्षसासूदरूपेणसंमिश्रितनरामिषम् ॥ शाकामिषंपुरःक्षिप्तंदृष्ट्वागुरुरथाब्रवीत् ॥ ३१ ॥ धिग्धिङ्नरामिषंराजं स्त्वयैतच्छद्मकारिणा ॥ खलेनोपहृतंमेऽद्यअतोरक्षोभविष्यसि ॥ ३२ ॥ रक्षःकृतमविज्ञायशप्त्वैवंसगुरुस्ततः ॥ पुनर्विमृश्यतंशापं चकारद्वादशाब्दिकम् ॥३३॥ राजापिकोपितःप्राहयदिदंमेनचेष्टितम् ॥ नज्ञातंचवृथाशप्तोगुरुंचैवशपाम्यहम् ॥ ३४ ॥

मांस मिलेहुए शाकको आगे रक्खाहुआ देखकर गुरुजी बोले ॥ ३१ ॥ कि हे राजन् ! तूने छलसे मेरे आगे मनुष्यका मांस परोसदिया तुझ को धिक्कारहै तैंने आज मेरे साथ दुष्टता करी इसलिये तू राक्षस होगा ॥ ३२ ॥ अब यह कपट राक्षसने कियाहै. इस बातको विनाजाने गुरुजीने शाप देकर विचारा तौ वह कृत्य राक्षसका था, तब वशिष्ठजीने उस शापको बारह वर्षके निमित्तही रक्खा ॥ ३३ ॥ राजा भी क्रोधकरके बोला कि मेरा विचार नहीं किया विना जाने ही मुझे वृथा शाप दिया. इसलिये मैं भी गुरुजीको शाप देताहूं ॥ ३४ ॥

इस प्रकार जल हाथमें लेकर गुरुजीको शाप देनेके निमित्त उद्यत हुआ; तब मदयन्तीने राजाके चरण पकड़कर राजाको मुनिके निमित्त शाप देनेसे निवारण किया ॥ ३५ ॥ रानीके वचनगौरवसे राजाने मुनिको शाप नहीं दिया, शापके निमित्त जो जल हाथमें लिया था, उसको अपने चरणोंपर छोडदिया. इसकारण उसके चरण कल्मष अर्थात् चित्रित होगये ॥ ३६ ॥ उसदिनसे लेकर उसका नाम कल्मषांघ्रि अर्थात् कल्माषपाद विख्यात हुआ. गुरुके शापसे वह राजा वनमें जाकर राक्षस होगया॥ ३७॥ और कालान्तक यमके समान राक्षसका रूप धारण किये हुए वनमें भ्रमण

इत्यपोंजलिनादायगुरुंशप्तुंसमुद्यतः ॥ पतित्वापादयोस्तस्यमदयंती न्यवारयत् ॥३५॥ ततोनिवृत्तःशापाच्चतस्यावचनगौरवात् ॥ तत्या
जपादयोरंभःपादौकल्मषतांगतौ ॥ ३६ ॥ कल्मषांघ्रिरितिख्यातस्ततःप्रभृतिपार्थिवः ॥ बभूवगुरुशापेनराक्षसोवनगोचरः ॥ ३७ ॥
सविभ्रद्राक्षसंरूपंकालांतकयमोपमम् ॥ चखादविविधाञ्जंतून्मानुषादीन्वनेचरः ॥ ३८ ॥ सकदाचिद्वनेक्वापिरममाणौकिशोरकौ ॥
अपश्यदंतकाकारोनवोढौमुनिदंपती ॥ ३९ ॥ राक्षसोमानुषाहारःकिशोरंमुनिनंदनम् ॥ जग्धुंजग्राहशापार्तोव्याघ्रोमृगशिशुं
यथा ॥ ४० ॥ रक्षोगृहीतंभर्त्तारंदृष्ट्वाभीताथतत्प्रिया ॥ उवाचकरुणंबालाक्रंदंतीभृशवेपिता ॥ ४१ ॥

करता हुआ अनेक जन्तु और मनुष्योंको खानेलगा॥ ३८॥एक समय उसने वनमें कहीं अपनी नवोढा वधूके साथ रमण करतेहुए किशोर अवस्थावाले किसी एक मुनि और उसकी पत्नीको देखा और प्रसन्न हुआ ॥ ३९ ॥ मनुष्योंका आहार करनेवाला वह राक्षस किशोर अवस्थावाले मुनि नन्दनको शापके कारण खानेके निमित्त इसप्रकार आक्रमण करता हुआ, कि जैसे कोई व्याघ्र मृगके बच्चेको ग्रहण करे ॥ ४० ॥ राक्षससे पकडे

हुए अपने पतिको देखकर उसकी प्रियपत्नी बहुत भयभीत हुई, और करुणापूर्वक काँपतीहुई रोकर बोली ॥ ४१ ॥ कि, हे सूर्यवंशके यशको धारणकरनेवाले ! इस पापको मत करो, मतकरो, तुम मदयन्तीके पति राजा हो, राक्षस नहींहो ॥ ४२ ॥ हे प्रभो ! प्राणोंसे प्यारे मेरे पतिको मत खाओ, कारण कि, दुःखी और शरणमें आये हुओंकी तुम्हीं गति हो ॥ ४३ ॥ इनके मरनेपर पापोंके ढेर और दुष्ट जड प्राणोंको रखकर मैं क्या करूंगी, और विना महात्मा स्वामीके बोझरूप ॥ ४४ ॥ मलीन, पापी और पाञ्चभौतिक इस देहसे क्या सुख होगा, यह मेरा पति बालक, वेदवित्

भोभोमामाकृथाःपापंसूर्यवंशयशोधर ॥ मदयंतीपतिस्त्वंहिराजेंद्रोनतुराक्षसः ॥ ४२ ॥ नखादममभर्त्तारंप्राणात्प्रियतमंप्रभो ॥ आर्त्तानांशरणार्त्तानांत्वमेवहियतोगतिः ॥ ४३ ॥ पापानामिवसंघातैःकिंमेदुष्टैर्जडासुभिः ॥ देहेनचातिभारेणविनाभर्त्रा महात्मना ॥ ४४ ॥ मलीमसेनपापेनपांचभौतेनकिंसुखम् ॥ बालोयंवेदविच्छांतस्तपस्वीबहुशास्त्रवित् ॥ ४५ ॥ अतोऽस्यप्राणदाने नजगद्रक्षात्वयाकृता ॥ कृपांकुरुमहाराजबालायांब्राह्मणस्त्रियाम् ॥ ४६ ॥ अनाथकृपणार्तेषुसघृणाःखलुसाधवः ॥ इत्थमभ्यर्थितः सोऽपिपुरुपादःसनिर्घृणः ॥ ४७ ॥ चखादशिरउत्कृत्यविप्रपुत्रंदुराशयः ॥ अथसाध्वीकृशादीनाविलप्यभृशदुःखिता ॥ ४८ ॥

शान्त, तपस्वी और बहुत शास्त्रोंका जाननेवाला है ॥ ४५ ॥ इसकारण इसके प्राणदानसे जगत्की रक्षा करो, हे महाराज ! मुझ बालक ब्राह्मणकी स्त्रीके ऊपर कृपाकरो ॥ ४६ ॥ अनाथ कृपण और दुःखियोंके ऊपर सज्जन पुरुष निःसंदेह दया करते हैं, इसप्रकार उसके प्रार्थना करनेपरभी उस राक्षसके हृदयमें दया न आई ॥ ४७ ॥ और उस पापीने उस ब्राह्मणका शिर फाड़कर खालिया, तब तो उसकी पतिव्रता स्त्रीने बहुत विलापकिया,

सब पृथ्वीपर फिरा ॥ ५४ ॥ किंतु पीछे आतीहुई पिशाची और घोररूपिणी स्त्रीकोही देखता हुआ वह मूर्ति धारण किये हुए वही ब्रह्महत्या थी ॥ ५५ ॥ कि जब शापके कारण उसने राक्षसरूप धारणकर मुनिपुत्रका भक्षण किया था उस अपने कर्मसे पीछे आतीहुई ब्रह्महत्याको ॥ ५६ ॥ श्रेष्ठ मुनियोंके उपदेशसे राजाने जाना, उसको दूर करनेके निमित्त व्याकुलमनवाले उस राजाने ॥ ५७ ॥ अनेक वर्षोंतक अनेक तीर्थ और अनेक क्षेत्रोंमें गमन किया, सब तीर्थोंमें बारंबार स्नान भी किया ॥ ५८ ॥ किन्तु वह ब्रह्महत्या निवृत्त न हुई तब मिथिलापुरीको गया और उसके बाहर बगीचेमें

आयांतींपृष्ठतोऽपश्यत्पिशाचींघोररूपिणीम् ॥ साहिमूर्तिमतीघोराब्रह्महत्यादुरत्यया ॥ ५५ ॥ यदासौशापविभ्रष्टोमुनिपुत्रमभक्षयत् ॥ तेनात्मकर्मणायांतींब्रह्महत्यांसपृष्ठतः ॥ ५६ ॥ बुबुधेमुनिवर्याणामुपदेशेनभूपतिः ॥ तस्यानिर्वेदमन्विच्छन्राजानिर्विण्णमानसः ॥ ५७ ॥ नानाक्षेत्राणितीर्थानिचचारबहुवत्सरम् ॥ यदासर्वेषुतीर्थेषुस्नात्वापिचमुहुर्मुहुः ॥ ५८ ॥ ननिवृत्ताब्रह्महत्यामिथिलायांययौतदा ॥ वाह्योद्यानगतस्तस्याश्चिंतयापरयार्दितः ॥ ५९ ॥ ददर्शमुनिमायांतंगौतमंविमलाशयम् ॥ हुताशनमिवाशेपतपस्विजनसेवितम् ॥ ६० ॥ विवस्वंतमिवात्यंतंघनदोषातमोनुदम् ॥ शशांकमिवनिःशंकमवदातगुणोदयम् ॥ ६१ ॥ महेश्वरमिवश्रीमद्द्विजराजकलाधरम् ॥ शांतंशिष्यगणोपेतंतपसामेकभाजनम् ॥ ६२ ॥ उपसृत्यसराजेंद्रःप्रणनाममुहुर्मुहुः ॥ गौतमोऽपिमुनिश्रेष्ठोराजानंरविवंशजम् ॥ ६३ ॥

अनेक प्रकारकी चिंता करनेलगा ॥ ५९ ॥ इतनेमें अग्निके तुल्य कान्तिमान और अनेक तपस्वियोंसे व्याप्त विमल आशय गौतम मुनिको आते हुए देखा ॥ ६० ॥ प्रभातकालके सूर्यके समान घनीरात्रिके अन्धकारको दूरकरनेको चन्द्रमारूप निःशंक निर्मल गुणोंके उदयवालें ॥ ६१ ॥ साक्षात् चन्द्रकी कलाको धारण कियेहुए श्रीमान् शिवजीके समान शान्त, शिष्यगणोंसे युक्त और तपकरनेवालोंके एक पात्र ॥ ६२ ॥ इसप्रकारके गौतममुनिको

संपूर्ण देवताओंका ध्यान किया. पर्ण (पत्ते) मूल और फल खाकर मैंने व्रताचरण करे ॥ ७१ ॥ वे सब व्रतआदि मैने किये. किन्तु मुझको स्वस्थता प्राप्त नहींहुई, आज मुझको जन्मकी साफल्यता प्राप्त होती जानपडतीहै ॥ ७२ ॥ जिन आपके दर्शनसे ही मुझको आनन्द प्राप्तहुआहै सैकडों वर्ष ढूँढनेसे मनुष्य अपने मनोरथको प्राप्त होही जाताहै ॥ ७३ ॥ यह मनुष्योंका कथनभी आज मुझमें 'सत्यहुआ' जो कि जन्मसे संचित पुण्योंके उदय होनेसे होताहै ॥ ७४ ॥ सो संसार सागरसे डरतेहुए मनुष्योंकी रक्षा करनेवाले आप नेत्रोंके सामने

तानिसर्वाणिकुर्वंतिस्वस्थंमांनकदाचन ॥ अद्यमेजन्मसाफल्यंसंप्राप्तामिवलक्ष्यते ॥ ७२ ॥ यस्यसंदर्शनादेवममात्मानंदभागभूत् ॥
अन्विच्छँल्लभतेक्वापिवर्षपूगैर्मनोरथम् ॥७३॥ इत्येवंजनवादोऽपिसंप्राप्तोमयिसत्यताम् ॥ आजन्मसंचितानांतुपुण्यानामुदयोदये॥७४॥
यद्भवान्भवभीतानांत्रातानयनगोचरः ॥ कस्माद्देशादिहायातोभवान्भवभयापहः ॥ ७५ ॥ दूरभ्रमणविश्रांतंशंकेत्वमिहचागतम् ॥
दृष्ट्वाश्चर्यमिवात्यर्थंमुदितोसिमुखश्रिया ॥ ७६ ॥ आनंदयसिमेचेतःप्रेम्णासंभाषणादिव ॥ अथमेतवपादाब्जंशरणंहिकृतैनसः ॥ ७७ ॥
शांतिंकुरुमहाभागयेनाहंसुखमाप्नुयाम् ॥ इतितेनसमादिष्टोगौतमःकरुणानिधिः ॥ ७८ ॥

प्रकटहुए हो, संसारसागरका भय दूरकरनेवाले आप किसदेशसे आयेहो ॥ ७५ ॥ दूर भ्रमण करके आनेके कारण श्रान्तहो, किन्तु मैं आश्चर्यसे देखताहूँ, कि तुम्हारा मुख प्रसन्नहै ॥ ७६ ॥ प्रेम पूर्वक भाषण करतेहुएके समान मेरे चित्तको आनन्द देतेहो, शरणमें आयेहुए मुझपापीके ऊपर तुम्हारे चरणकमलोंकी प्राप्ति हुईहै ॥ ७७ ॥ हे महाभाग ! मेरे ऊपर शान्तिकरो. जिससे मुझको सुख प्राप्तहोवै, इस प्रकार राजाके कहनेपर करुणाके

और बहुत दुःखी हुई ॥ ४८ ॥ और अपने पतिकी अस्थियों (हड्डियों) को इकट्ठाकर घोर चिता रचती हुई और पतिके साथ जानेकी इच्छासे स्वयं भी पतिके साथ अग्निमें प्रवेश किया ॥ ४९ ॥ और उससमय राक्षसरूपधारी राजाके शाप रूप अस्त्र मारा अर्थात शाप दिया, कि हे पापी राजा। तैने मेरा पति खायाहै ॥ ५० ॥ इसलिये मुझ पतिव्रताके घोर शापको भोग, आजसे लेकर जिस समय तू स्त्रियोंमें गमन करेगा ॥ ५१ ॥ उसीसमय तू मरजायगा, इसप्रकार कहकर वह सती अग्निमें प्रवेश करके पतिके लोकको सिधारी, राजाने इसप्रकार वनमें रहकर बारह वर्ष विताये, फिर मनु

आहृत्यभर्तुरस्थीनिचितांचक्रेयथोल्बणाम्॥भर्तारमनुगच्छंतीसंविशंतीहुताशनम् ॥४९॥राजानंराक्षसाकारंशापास्त्रेणजघानतम्॥रेरेपा
र्थिवपापात्मंस्त्वयामेभक्षितःपतिः॥५०॥अतःपतिव्रतायास्त्वंशापंभुंक्ष्वयथोल्बणम्॥ अद्यप्रभृतिनारीषुयदात्वमपिसंगतः॥५१॥तदामृ
तिस्तवेत्युक्त्वाविवेशज्वलनंसती ॥ अनपत्यःसनिर्विण्णोराज्यभोगेषुपार्थिवः ॥५२॥ विसृज्यसकलांलक्ष्मींययौभूयोपिकाननम् ॥ सूर्य
वंशप्रतिष्ठित्यैवाशिष्ठोमुनिसत्तमः ॥ ५३ ॥ तस्यामुत्पादयामासमदयंत्यांसुतोत्तमम् ॥ विसृष्टराज्योराजापिविचरन्सकलांमहीम् ॥ ५४ ॥

ष्यरूप धारणकर अपनी राजधानीमें आया और सन्तानरहित उस राजाने राज्यके भोग भोगे उसकी स्त्री मदयन्तीको शापका वृत्तान्त विदित होगयाथा कि जिस समय स्त्रीमें गमन करेगा तभी इसकी मृत्यु होजायगी, इसलिये रानी उससे रतिके निमित्त सदा निषेध करती रहतीथी. तव सन्तान न होनेके कारण राजाको राज्यसे विरक्तता प्राप्तहुई ॥५२॥ और संपूर्ण राजलक्ष्मीको छोडकर वनमें तप करनेको चलागया। जब वशिष्ठजीने देखा कि सूर्यवंश नष्ट हुआ चाहताहै, तो सूर्यवंशकी स्थितिके निमित्त मुनिश्रेष्ठ वशिष्ठजीने ॥ ५३ ॥ उस मदयन्तीमें उत्तमपुत्र उत्पन्न किया। राजको छोडकर भी राजा

सब पृथ्वीपर फिरा ॥ ५४ ॥ किंतु पीछे आतीहुई पिशाची और घोररूपिणी स्त्रीकोही देखता हुआ वह मूर्ति धारण किये हुए वही ब्रह्महत्या थी ॥ ५५ ॥
कि जब शापके कारण उसने राक्षसरूप धारणकर मुनिपुत्रका भक्षण किया था उस अपने कर्मसे पीछे आतीहुई ब्रह्महत्याको ॥ ५६ ॥ श्रेष्ठ मुनियोंके
उपदेशसे राजाने जाना, उसको दूर करनेके निमित्त व्याकुलमनवाले उस राजाने ॥ ५७ ॥ अनेक वर्षोंतक अनेक तीर्थ और अनेक क्षेत्रोंमें गमन
किया, सब तीर्थोंमें वारंवार स्नान भी किया ॥ ५८ ॥ किन्तु वह ब्रह्महत्या निवृत्त न हुई तब मिथिलापुरीको गया और उसके बाहर बगीचेमें

आयांतींपृष्ठतोऽपश्यत्पिशाचींघोररूपिणीम् ॥ साहिमूर्तिमतीघोराब्रह्महत्यादुरत्यया ॥ ५५ ॥ यदासौशापविभ्रष्टोमुनिपुत्रमभक्षयत् ॥
तेनात्मकर्मणायांतींब्रह्महत्यांसपृष्ठतः ॥ ५६ ॥ बुबुधेमुनिवर्याणामुपदेशेनभूपतिः ॥ तस्यानिर्वेदमन्विच्छन्राजानिर्विण्णमानसः
॥ ५७ ॥ नानाक्षेत्राणितीर्थानिचचारबहुवत्सरम् ॥ यदासर्वेषुतीर्थेषुस्नात्वापिचमुहुर्मुहुः ॥ ५८ ॥ ननिवृत्ताब्रह्महत्यामिथिलायांययौतदा ॥
वाह्योद्यानगतस्तस्याश्चिंतयापरयार्दितः ॥ ५९ ॥ ददर्शमुनिमायांतंगौतमंविमलाशयम् ॥ हुताशनमिवाशेषतपस्विजनसेवितम् ॥ ६० ॥
विवस्वंतमिवात्यंतंघनदोषातमोनुदम् ॥ शशांकमिवनिःशंकमवदातगुणोदयम् ॥ ६१ ॥ महेश्वरमिवश्रीमद्द्विजराजकलाधरम् ॥
शांतंशिष्यगणोपेतंतपसामेकभाजनम् ॥ ६२ ॥ उपसृत्यसराजेंद्रःप्रणनाममुहुर्मुहुः ॥ गौतमोऽपिमुनिश्रेष्ठोराजानंरविवंशजम् ॥ ६३ ॥

अनेक प्रकारकी चिंता करनेलगा ॥ ५९ ॥ इतनेमें अग्निके तुल्य कान्तिमान और अनेक तपस्वियोंसे व्याप्त विमल आशय गौतम मुनिको आते हुए
देखा ॥ ६० ॥ प्रभातकालके सूर्यके समान घनीरात्रिके अन्धकारको दूरकरनेको चन्द्रमारूप निःशंक निर्मल गुणोंके उदयवाले ॥ ६१ ॥ साक्षात्
चन्द्रकी कलाको धारण कियेहुए श्रीमान् शिवजीके समान शान्त, शिष्यगणोंसे युक्त और तपकरनेवालोंके एक पात्र ॥ ६२ ॥ इसप्रकारके गौतममुनिको

समुद्र गौतम ऋषि ॥ ७८ ॥ घोर पापोंको भलीप्रकार दूरकरनेके निमित्त आज्ञा देतेहुए । गौतमऋषिबोले । हे सज्जन राजेन्द्र ! तुम धन्यहो महापापोंसे
मतडरो ॥ ७९ ॥ शरणमें आयेहुए भक्तोंके ऊपर रक्षा करनेवाले. शिवजीके होतेहुए भय कहाँ. हे राजन् ! एक और बडा सुन्दर क्षेत्रहै ॥ ८० ॥
वह महापातकोंका दूरकरनेवालाहै. और वह मनोरथक्षेत्र गोकर्णनामसे विख्यात है वहाँ निवास करनेसे बडेसे बडे पापभी नही रहसकते ॥ ८१ ॥
वहाँ शिवजीके स्मरण करनेसे संपूर्ण पाप नष्ट होजातेहैं. जहा शिवजीभी स्वयं निवास करतेहैं जिसप्रकार कैलास और मन्दराचल पर्वतपर शिवजी नि

समादिदेशघोराणामघानांसाधुनिष्कृतिम् ॥ गौतमउवाच ॥ ॥ साधुराजेंद्रधन्योऽसिमहाघेभ्योभयंत्यज ॥ ७९ ॥ शिवेत्रात
रिभक्तानांक्वभयंशरणैषिणाम् ॥ शृणुराजन्महाभागक्षेत्रमन्यत्प्रतिष्ठितम् ॥ ८० ॥ महापातकसंहारिगोकर्णाख्यंमनोरमम् ॥ तत्र
स्थितिर्नपापानांमहद्भ्योमहतामपि ॥ ८१ ॥ स्मृतोवशेषपापघ्नोयत्रसंनिहितःशिवः ॥ यथाकैलासशिखरेयथाचांबरमूर्द्धनि ॥ ८२ ॥
निवासोनिश्चितःशंभोस्तथागोकर्णमंडले ॥ नाग्निनानशशांकेननताराग्रहनायकैः ॥ ८३ ॥ तमोनिस्तीर्यतेसम्यग्यथासवितृदर्शनात् ॥
तथैवनेतरैस्तीर्थैर्नचक्षेत्रैर्मनोरमैः ॥ ८४ ॥ सद्यःपापविशुद्धिःस्याद्यथागोकर्णदर्शनात् ॥ अपिपापशतंकृत्वाब्रह्महत्यादिमानवः॥८५॥

वास करतेहैं ॥८२॥ इसीप्रकार गोकर्णक्षेत्रमेंभी शिवजी निवास करते है, अग्नि, चन्द्रमा, तारा तथा अन्य ग्रहनायकोंसे ॥ ८३ ॥ इसप्रकार अंधकार
दूर नही होता. जैसा कि सूर्य्य भगवान्के दर्शनमात्रसे समस्त अंधकार नष्ट होजाताहै, इसीप्रकार अन्य तीर्थ और सुन्दरक्षेत्रोंमें वासकरनेसे ॥ ८४ ॥
तत्काल शुद्धि नहीं होती. कि, जिसप्रकार गोकर्णके दर्शनमात्रसे संपूर्णपापोंकी शुद्धि होजातीहै ब्रह्महत्यादि सौ पाप करकेभी मनुष्य ॥ ८५ ॥

यदि एक वारभी गोकर्णमें प्रवेशकरे. तौ उसको पापोंसे कहीभी डर नहीं रहताहै. वहीं सब महात्मा तपकरके शान्तिको प्राप्त हुए हैं ॥८६॥ इन्द्र, उपेन्द्र (विष्णु) और ब्रह्मा आदि सब सिद्धिकी इच्छासे इसक्षेत्रका सेवन करतेहैं यहाँ जिसने एक दिनभी व्रत किया ॥ ८७ ॥ जो उसका फल मिलता है उसकी समानता अन्यक्षेत्रमें लक्षवर्षपर्यन्त व्रतकरनेसे होसकतीहै. जहाँ इन्द्र ब्रह्मा और विष्णुआदि देवताओंकी कामना सिद्धिके निमित्त॥८८॥

सकृत्प्रविश्यगोकर्णंनबिभेतिह्यघात्काचित्॥तत्रसर्वेमहात्मानस्तपसाशांतिमागताः॥८६॥ इंद्रोपेंद्रविरिंच्याद्यैःसेव्यतेसिद्धिकांक्षिभिः॥
तत्रैकेनदिनेनापियत्कृतंव्रतमुत्तमम् ॥८७॥ तदन्यत्राब्दलक्षेणकृतंभवतितत्समम् ॥ यत्रेंद्रब्रह्मविष्ण्वादिदेवानांहितकाम्यया ॥ ८८ ॥
महाबलाभिधानेनदेवःसंनिहितःस्वयम्॥घोरेणतपसालब्धंरावणाख्येनरक्षसा॥ ८९ ॥ तल्लिंगंस्थापयामासगोकर्णेगणनायकः ॥ इंद्रो
ब्रह्मामुकुंदश्चविश्वेदेवामरुद्गणाः ॥ ९० ॥ आदित्यावसवोदस्रौशशांकश्चदिवाकरः ॥ एतैर्विमानगैः प्रायोदेवास्तेसहपार्षदैः ॥ ९१ ॥
पूर्वद्वारंनिषेवंतेदेवदेवस्यशूलिनः ॥ योन्योमृत्युःस्वयंसाक्षाच्चित्रगुप्तश्चपावकः ॥ ९२ ॥ पितृभिःसहरुद्रैश्चदक्षिणद्वारमाश्रितः ॥
वरुणःसरितांनाथोगंगादिसरितांगणैः ॥ ९३ ॥

महाबलनामक शिवजी स्वयं निवास करतेहैं, जो लिंग कि राक्षसेश्वर रावणको बडा तपकरनेसे प्राप्त हुआ ॥ ८९ ॥ उस लिंगको रावणने गोकर्णमें स्थापित किया इन्द्र ब्रह्मा, विष्णु, विश्वेदेवा, मरुद्गण, वसु ॥ ९० ॥ अश्विनीकुमार, चन्द्र, सूर्यआदिदेवता विमानमें स्थित होकर अपने अपने पार्षदोंके साथ ॥ ९१ ॥ देवाधिदेव शिवजीके पूर्वद्वारका सेवन करतेहैं, यम, चित्रगुप्त और अग्नि ॥ ९२ ॥ पितर और रुद्रोंके साथ दक्षिण द्वा

रपर स्थित रहतेहैं, सब नदियोंके स्वामी वरुणदेव सब नदियोंसमेत ॥ ९३ ॥ पश्चिमद्वारपर होकर शिवजीका सेवन करतेहैं और वायु, कुवेर, देवेशी, भद्रकर्णिका ॥ ९४ ॥ चंडिका आदि माताओंके साथ उत्तरद्वारपर स्थित रहतीहैं, । विश्वावसु, चित्ररथ, चित्रसेन और महाबल. यह ॥ ९५ ॥ गंधर्वगणोंके साथ महाबलनामक शिवजीका पूजन करतेहैं, रंभा, घृताची, मेनका, पूर्वाचित्ति तिलोत्तमा ॥ ९६ ॥ और उर्वशी आदि देवांगना शिवजीके आगे नृत्य करतीहैं, वशिष्ठ, कश्यप, कण्व, महातपस्वी विश्वामित्र ॥ ९७ ॥ जैमिनि भरद्वाज, जाबालि, क्रतु, अंगिरा

आसेवतेमहादेवंपश्चिमद्वारमाश्रितः ॥ तथावायुःकुबेरश्चदेवेशीभद्रकर्णिका ॥ ९४ ॥ मातृभिश्चंडिकाद्याभिरुत्तरद्वारमाश्रिताः ॥
विश्वावसुश्चित्ररथश्चित्रसेनोमहाबलः ॥ ९५ ॥ सहगंधर्ववर्गैश्चपूजयंतिमहाबलम् ॥ रंभाघृताचीमेनाचपूर्वचित्तिस्तिलोत्तमा ॥ ९६ ॥
नृत्यंतिपुरतःशंभोरुर्वश्याद्याःसुरस्त्रियः ॥ वशिष्ठःकश्यपःकण्वोविश्वामित्रोमहातपाः ॥ ९७ ॥ जैमिनिश्चभरद्वाजोजाबालिःक्रतुरंगिराः ॥
एतेवयंचराजेंद्रसर्वेब्रह्मर्षयोमलाः ॥ ९८ ॥ देवंमहाबलंभक्त्यासमंतात्पर्युपास्महे ॥ मरीचिनासहात्रिश्चदक्षाद्याश्चमुनीश्वराः ॥ ९९ ॥
सनकाद्यामहात्मानउपविष्टाउपासते ॥ तथैवमुनयःसाध्याअजिनांबरधारिणः ॥ १०० ॥ दंडिनोव्रतमुंडाश्चस्नातकाब्रह्मचारिणः ॥
त्वगस्थिमात्रावयवास्तपसादग्धकिल्बिषाः ॥ १०१ ॥

यह और हे राजेन्द्र ! हम सब निर्मल महर्षि ॥ ९८ ॥ चारों ओरसे भक्तिपूर्वक महाबलनामक शिवजीकी उपासना करतेहैं, और मरीचिके साथ दक्षआदि मुनीश्वर ॥ ९९ ॥ सनकादि महात्मा बैठेहुए उपासना करतेहैं, इसीप्रकार मृगचर्म धारण कियेहुए ॥ १०० ॥ दंडकमंडलु धारण कियेहुए बडे २ मुनीश्वर, स्नातक और ब्रह्मचारी कि जिनके शरीरमें अस्थि और चर्मही रहगयाहै, और तपसे जिनके पाप नष्ट होगयेहैं ॥ १०१ ॥

ऐसे वे देवेश शिवजीका परमभक्तिसे सेवन करतेहैं, इसीप्रकार देव, गंधर्व, पितर, सिद्ध, चारण ॥ १०२ ॥ विद्याधर किंपुरुष, किन्नर, गुह्यक, खग, नाग, पिशाच, दैतेय, महाबल ॥ १०३ ॥ यह सब अनेक ऐश्वर्यसंपन्न अनेक भूषण और वाहनसे युक्त, सूर्य अग्नि और चन्द्रमाकी समान कान्ति युक्त ॥ १०४ ॥ और बिजुलीके पुंजकी समान शोभायमान चारोंओरसे व्याप्त विमानोंमें बैठकर शिवजीकी स्तुति, गान, पठन और प्रणाम कर

सेवंतेपरयाभक्त्यादेवदेवंपिनाकिनम् ॥ तथादेवाः सगंधर्वाःपितरःसिद्धचारणाः ॥ २ ॥ विद्याधराःकिंपुरुषाःकिन्नरागुह्यकाः खगाः ॥ नानापिशाचावेतालादैतेयाश्चमहाबलाः ॥ ३ ॥ नानाविभवसंपन्नानानाभूषणवाहनाः ॥ विमानैःसूर्यसंकाशैरग्निवर्णैः शशिप्रभैः ॥ ४ ॥ विद्युत्पुंजनिभैरन्यैःसमंतात्परिवारितम् ॥ प्रस्तुवंतिप्रगायंतिपठंतिप्रणमंतिच ॥ ५ ॥ प्रनृत्यंतिप्रहृष्यंतिगोकर्णे पृथिवीपते ॥ लभंतेऽभीप्सितान्कामान्रमंतेचयथासुखम् ॥ ६ ॥ गोकर्णसदृशंक्षेत्रंनास्तिब्रह्मांडगोलके ॥ तत्रघोरंतपस्तप्तमगस्त्येनमहात्मना ॥ ७ ॥ तथासनत्कुमारेणप्रियव्रतसुतैरपि ॥ अग्निनादेववर्येणकंदर्पेणचपार्थिव ॥ ८ ॥ तथादेव्याभद्रकाल्याशिशुमारेणधीमता ॥ दुर्मुखेनफणींद्रेणमणिनागाह्वयेनच ॥ ९ ॥

तेहैं ॥ ॥ १०५ ॥ नृत्य करतेहैं प्रसन्न होतेहैं, इसप्रकारके गोकर्णक्षेत्रमें यह सब अपने अपने मनोरथोंको प्राप्तहोते और सुखपूर्वक रमण करतेहैं ॥ १०६ ॥ इस भूमंडलपर गोकर्णके समानकोई क्षेत्र नहींहै. वहाँ अगस्त्यमुनिने घोर तप कियाहै ॥ १०७ ॥ इसीप्रकार सनत्कुमार प्रियव्रतके पुत्र (उत्तानपाद) ने तपकिया, और हे राजन् ! देवश्रेष्ठ अग्नि और कामदेवनेभी तप किया ॥ १०८ ॥ इसीप्रकार भद्रकालीदेवी और बुद्धिमान्

शिशुमारने तप किया, और दुर्मुख फणीन्द्रमणि नाग ॥ १०९ ॥ गरुड और विभीषण आदि महात्माओंने तपकिया, यह और देवता तथा अन्य सिद्ध दानव और मनुष्योंने ॥ ११० ॥ गोकर्णमें देवेश शिवजीकी भक्ति पूर्वक आराधना करके अपने अपने नामसे शिव जीके सहस्रों लिंग स्थापनकिये ॥१११॥ और परम सिद्धिको प्राप्तहुए, तथा अपने २नामसे तीर्थ स्थापनभी किये, हे पार्थिव ! यहां सबदेवताओंके स्थान हैं ॥ ११२ ॥ और इस क्षेत्रमें हे राजन् ! विष्णु, परमेष्ठि ब्रह्मा, स्वामिकार्तिकेय, गणपति ॥११३॥ धर्म, क्षेत्रपाल और दुर्गाजीके स्थान

विभीषणेनपुण्येनतपस्तप्तंमहात्मना ॥ एतेचान्येचगीर्वाणाःसिद्धदानवमानवाः ॥ ११० ॥ गोकर्णेदेवदेवेशंशिवमाराध्यभक्तितः ॥
स्वनामकानिलिंगानिस्थापयित्वासहस्रशः ॥११ ॥ लेभिरेपरमांसिद्धिंतथातीर्थानिचक्रिरे ॥ अत्रस्थानानिसर्वेषांदेवानांसंतिपार्थिव ॥
॥ १२ ॥ विष्णोश्चदेवदेवस्यब्रह्मणःपरमेष्ठिनः ॥ कार्त्तिकेयस्यवीरस्यगजवक्रस्यचानघ ॥१३॥ धर्मस्यक्षेत्रपालस्यदुर्गायाश्चमहामते॥
गोकर्णेशिवलिंगानिविद्यंतेकोटिकोटिशः॥१४॥ असंख्यातानितीर्थानितिष्ठंतिचपदेपदे॥ बहुनात्रकिमुक्तेनगोकर्णस्थानिपार्थिव॥१५॥
सर्वाण्यश्मानिलिंगानितीर्थान्यंभांसिसर्वशः॥गोकर्णेशिवलिंगानांतीर्थानामपिभूरिशः ॥१६॥ गीयतेमाहिमाराजन्पुराणेषुमहर्षिभिः ॥
गोकर्णेकोटितीर्थंचतीर्थानांमुख्यतांगतम्॥१७॥ सर्वेषांशिवलिंगानांसार्वभौमोमहाबलः॥कृतेमहाबलःश्वेतस्त्रेतायामातिलोहितः॥१८॥

(मन्दिर) हैं हे राजन् ! गोकर्णक्षेत्रमें शिवजीके करोड़ों लिंग विद्यमान हैं ॥ ११४ ॥ गोकर्णमें पदपदपर असंख्य तीर्थहैं, हे राजन् ! बहुत कहनेसे क्याहै, गोकर्णमें ॥ ११५ ॥ जितने पत्थरहैं, वे सब शिवलिंगहैं और जितने जलहै, वे सब तीर्थरूप हैं, हे राजन् ! गोकर्णके शिवलिंग और तीर्थोंकी पूर्णमहिमा ॥ ११६ ॥ महर्षियोंने पुराणोंमें कथन कीहै, गोकर्णमें करोड तीर्थ मुख्यहैं ॥ ११७ ॥ और सब शिवलिंगोंमें शिवजीका महाबलनामक

शिवलिंग मुख्यहै, यह महाबलनामक शिवलिंग सत्ययुगमें श्वेत (सफेद) त्रेतामें अतिलोहित (बहुतलाल ॥ ११८ ॥ द्वापरमें पीत (पीला) और
कलियुगमें श्यामवर्णका रहताहै, इसके मूलका अन्त सात पातालतकभी नही मिला ॥ ११९ ॥ घोर कलियुगके आनेपर यह लिंग कोमलताको प्राप्त
होजायगा, पश्चिमसमुद्रके किनारे गोकर्णक्षेत्र विराजमान है ॥ १२० ॥ यह क्षेत्र ब्रह्महत्याआदि पापोंको नष्ट करताहै, इसमें आश्चर्य क्याहै, जो ब्रह्म
घाती, प्राणियोंसे द्रोह करनेवाले मूर्ख ॥ १२१ ॥ और जो सर्व गुणहीन, परदारामें रत, दुर्वृत्त, दुराचारी, दुःशील, कृपण ॥ १२२ ॥ लुब्ध, क्रूर,

द्वापरेपीतवर्णश्चकलौश्यामोभविष्यति ॥ आक्रांतंसप्तपातालंकुर्वन्नापमहाबलः ॥ १९ ॥ प्राप्तेकलियुगेघोरेमृदुतामुपयास्यति ॥
पश्चिमांबुधितीरस्थंगोकर्णक्षेत्रमुत्तमम् ॥ १२० ॥ ब्रह्महत्यादिपापानिदहतीतिकिमद्भुतम् ॥ येचात्रब्रह्महंतारोयेचभूतद्रुहःशठाः ॥
॥ २१ ॥ येसर्वेगुणहीनाश्चपरदाररताश्चये ॥ येदुर्वृत्तादुराचारादुःशीलाःकृपणाश्चये ॥ २२ ॥ लुब्धाःक्रूराःखलामूढाःस्तेनाश्चैवा
तिकामिनः ॥ तेसर्वेप्राप्यगोकर्णंस्नात्वातीर्थजलेषुच ॥ २३ ॥ देवंमहाबलंदृष्ट्वाप्रयाताः शांकरंपदम् ॥ तत्रपुण्यासुतिथिषुपुण्यर्क्षेषुपु
ण्यवासरे ॥ २४ ॥ येऽर्चयंतिमहेशानंतेरुद्राःस्युर्नसंशयः ॥ यदाकदाचिद्गोकर्णेयोवाकोवापिमानवः ॥२५॥ प्रविश्यपूजयेदीशंसगच्छे
द्ब्रह्मणःपदम् ॥ रवींदुसौम्यवारेषुयदादर्शोभविष्यति ॥२६॥

खल, मूढ, चोर और अतिकामी वे सब इस गोकर्णक्षेत्रमें प्राप्त हो तीर्थके जलोंमें स्नान करके ॥ १२३ ॥ महाबलनामक महादेवके दर्शनमात्रसे शिव
जीके परमपदको प्राप्त होजातेहैं, वहां पवित्र तिथि, पवित्र नक्षत्र और पवित्र दिवसमें ॥ १२४ ॥ जो शिवजीका पूजन करतेहैं, वे निःसन्देह रुद्रस्व
रूप होजातेहैं; जब कभी गोकर्णमें जो कोई पुरुष ॥ १२५ ॥ प्रवेश करके शंकरका पूजन करताहै, उसको ब्रह्मलोककी प्राप्ति होतीहै, रवि; सोम और

बुधवारको जब अमावास्या हो ॥ १२६ ॥ तब समुद्रमें स्नान, करके दान, पितृतर्पण शिवपूजा, होम, व्रत और ब्राह्मणपूजन करना चाहिये ॥१२७॥ उसदिन जो कुछ कर्म कियाजाताहै, उसका अनन्त फल मिलताहै, व्यतीपातआदि योग, संक्रान्ति ॥ १२८ ॥ और प्रदोषके समय शिवजीका पूजन करनेसे मुक्तिकी प्राप्ति होतीहै, इसप्रकार कहकर गौतमऋषि बोले कि, हे राजन्! मुक्ति देनेवाली एक तिथिको एकान्तमें तुमसे कहताहूं ॥ १२९ ॥ जिसमें व्रत करनेसे महाव्याधकोभी निःसन्देह शिवजीके लोककी प्राप्तिहुई, माघमासके कृष्णपक्षकी जो महापुण्यकी देनेवाली चतुर्दशीहै ॥ १३० ॥

तदाजलनिधौस्नानंदानंचापिंतृतर्पणम् ॥ शिवपूजाजपोहोमोव्रतचर्याद्विजार्चनम् ॥ २७ ॥ यत्किंचिद्राकृतंकर्मतदनंतफलप्रदम् ॥ व्यतीपातादियोगेषुरविसंक्रमणेषुच ॥ २८ ॥ महाप्रदोषवेलासुशिवपूजाविमुक्तिदा ॥ अथैकांतेप्रवक्ष्यामितिथिंपार्थिवमुक्तिदाम् ॥ ॥ २९ ॥ यस्यांकिलमहाव्याधोलेभेशंभोःपरंपदम् ॥ माघमासेमहापुण्यायासाकृष्णचतुर्दशी ॥ १३० ॥ शिवलिंगंबिल्वपत्रंदुर्लभंहिचतुष्टयम् ॥ अहोबलवतीमायाययाशैवीमहातिथिः ॥ ३१ ॥ नोपोष्यतेजनैर्मूढैर्महामूकैरिवत्रयी ॥ उपवासोजागरणंसन्निधिः परमेशितुः ॥ ३२ ॥ गोकर्णेशिवलोकस्यनृणांसोपानपद्धतिः ॥ शृणुराजन्नहमपिगोकर्णादधुनागतः ॥३३॥

उसदिन गोकर्णक्षेत्रमें चतुष्टय फलके दाता शिवलिंगका बिल्वपत्रसे पूजन करना दुर्लभहै, अहो माया बलवतीहै, जिसके प्रतापसे यह शिवजीकी महातिथि हुई ॥ १३१ ॥ मूढ, महामूक और मन्दभागी पुरुष इसमें उपवास नही करतेहैं. गोकर्णक्षेत्रमें उपवास जागरण और शिवजीकी निकटता ॥ १३२ ॥ यह सब कृत्य मनुष्योंके लिये शिवलोककी सोपान (सीढी) रूपहैं, इतना कह फिर गौतममुनि बोले कि, हे राजन्! सुनो, मैंभी इस समय गोकर्णक्षेत्रसे

आरहाहूं ॥ १३३ ॥ वहां मैंने उपवास और शिवचतुर्दशीका बडा उत्सव देखा, इस शिवचतुर्दशीके उत्सवको देखनेकी इच्छासे ॥ १३४ ॥ सब देशोंसे चारों वर्णोंके महापुरुष स्त्री, वृद्ध, बाल और चतुर्थआश्रमधारी पुरुष आये ॥ १३५ ॥ और आकर महाबलनामक शिवजीका दर्शन करनेसे कृतकृत्य हुए, मैं और यह शिष्य तथा और ॥ १३६ ॥ राजर्षि, सनकादिक ब्रह्मर्षि सब तीर्थोंमें स्नान और महाबलनामक शिवजीकी उपासना करके

उपास्यैनांशिवातिथिंविलोक्यचमहोत्सवम् ॥ अस्यांशिवतिथौसर्वेमहोत्सवदिदृक्षवः ॥३४॥ आगताःसर्वदेशेभ्यश्चातुर्वर्ण्यामहाजनाः ॥
स्त्रियोवृद्धाश्चबालाश्चचतुर्थाश्रमवासिनः॥१३५॥ आगत्यदृष्ट्वादेवेशंलेभिरेकृतकृत्यताम् ॥ अथाहमप्यमीशिष्याऋषयश्चतथापरे॥३६॥
राजर्षयश्चराजेंद्रसनकाद्याःसुरर्षयः ॥ स्नात्वासर्वेषुतीर्थेषुसमुपास्यमहाबलम् ॥३७॥ लब्ध्वाचजन्मसाफल्यंप्रयाताःसर्वतोदिशम् ॥
अमुनाद्यनरेंद्रेणजनकेनायियक्षुणा॥३८॥ निमंत्रितोहंसंप्राप्तोगोकर्णाच्छिवमंदिरात्॥ प्रत्यागमंकिमप्यंगदृष्ट्वाश्चर्यमहंपथि ॥ महानंदे
नमनसाकृतार्थोस्मिमहीपते ॥ १३९ ॥ ॥ इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेगोकर्णमहिमानुवर्णनंनामाद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ ॥ छ ॥
॥ राजोवाच ॥ किंदृष्टंभवताब्रह्मन्नाश्चर्यंपथिकुत्रवा ॥ तन्ममाख्याहियेनाहंकृतकृत्यत्वमाप्नुयाम् ॥ १ ॥

॥ १३७ ॥ अपने जन्मकी सफलताको प्राप्त हुए और अपने अपने देशोंको गये हे राजन् ! इस यज्ञ करनेवाले जनकके द्वारा ॥ १३८ ॥ निमन्त्रित्र हुआ गोकर्णक्षेत्रसे आयाहूं, मार्गमें जो मैंने आश्चर्य देखाहै. हे अंग ! उसको देख मुझे बडा आनन्द हुआ और मैं कृतार्थ होगया ॥ १३९ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां गोकर्णमहिमानुवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ इसप्रकार गौतम मुनिका वचन सुन

राजा बोला कि, हे ब्रह्मन् ! मार्गमें आपने क्या आश्चर्य देखा और कहां देखा. सो मुझसेभी कहो, जिससे मैं कृतकृत्य होऊं ॥ १ ॥ गौतममुनि बोले कि, हे राजन् ! गोकर्णसे आतेहुए मध्याह्नके समय किसी स्थानपर हमको एक निर्मल सरोवर मिला ॥ २ ॥ वहां जलको छू और मार्गके श्रमको निवारण कर वटवृक्षकी स्निग्ध और शीतल छायामें बैठगये. ॥ ३ ॥ इतनेमें कुछ दूरसे आतीहुई चांडाली कि जिसकी दशा हम वर्णन करतेहैं सुनो, बूढी, अन्धी, दुबली, मुख जिसका सखगयाहै, निराहार, अनेक रोगोंसे पीडित ॥ ४ ॥ कुश और व्रण अर्थात् फोडोंसे जिसका अंग व्याप्तहै, कीड़ोंसे

॥ गौतमउवाच ॥ ॥ गोकर्णादहमागच्छन्कापिदेशेविशांपते ॥ जातेमध्याह्नसमयेलब्धवान्विमलंसरः ॥ २ ॥ तत्रोपस्पृश्यसलिलंविनीयचपथःश्रमम्॥ सुस्निग्धशीतलच्छायंन्यग्रोधंसमुपाश्रयम्॥ ३॥ अथाविदूरेचांडालींवृद्धामंधांकृशाकृतिम् ॥ शुष्यन्मुखींनिराहारांबहुरोगनिपीडिताम् ॥ ४ ॥ कुष्ठव्रणपरीतांगीमुद्यत्क्रमिकुलाकुलाम् ॥ पूयशोणितसंसक्तक्षरत्पटलसत्कटीम् ॥ ५ ॥ महायक्ष्मनलस्थेनकंठसंरोधविह्वलाम् ॥ विनष्टदंतामव्यक्तांविलुठंतींमुहुर्मुहुः ॥ ६ ॥ चंडार्ककिरणस्पृष्टखरोष्णरजसाप्लुताम् ॥ विण्मूत्रपूयदिग्धांगीमसृग्गंधदुरासदाम् ॥७॥ कफरोगवहुश्वासश्लथन्नाडीबहुव्यथाम् ॥ विध्वस्तकेशावयवामपश्यंमरणोन्मुखीम् ॥८॥

व्याप्त, राध और रुधिरसे युक्त, कमरमें फटा वस्त्र पहिने ॥ ५ ॥ महायक्ष्मा और कण्ठके रोगसे विह्वल, दांतरहित अव्यक्त स्वरसे बारंबार विलाप करतीहुई ॥ ६ ॥ प्रचण्ड सूर्यकी किरणोके स्पर्शसे और खरखरी तथा उष्ण धूलसे व्याप्त, विष्ठा, मूत्र और राधसे जिसका शरीर भीग रहाहै, बडी दुर्गंध युक्त॥७॥ कफ रोग और श्वाससे जिसको अत्यन्त पीड़ा होरहीहै और बाल जिसके विखरे हुएहैं मरनेको उद्यत. इसप्रकारकी चांडालीको देखा ॥ ८ ॥

इसप्रकारकी अनेक व्यथाओंसे युक्त उसको देखकर मैं दयासे आर्द्र होगया, और जबतक यह मरे तबतक कुछ समय प्रतीक्षाके निमित्त मैं
वहीं स्थितरहा ॥ ९ ॥ उसीसमय आकाशमें सूर्यकी किरणोंके समानकान्तियुक्त, दिव्य और किन्नरोंके द्वारा लायेहुए विमानको देखा ॥ १० ॥
सूर्य, चन्द्र और अग्निके समान कान्तिवाले उस विमानमें सूर्यकेसमान कान्तिवाले शिवजीके दूतोंको देखा ॥ ११ ॥ वे त्रिशूल, खट्वांग, खड्ग, चर्म
हाथमें धारण कियेहैं, मस्तकपर अर्धचन्द्र धारण किये, प्रफुल्लित चन्द्र और फुईके समान मनोहर मुकुट कुण्डल, केयूर कंकणआदि अनेक आभूषणोंको

ताहग्व्यथांचतांवीक्ष्यकृपयाहंपरिप्लुतः ॥ प्रतीक्षन्मरणंतस्याःक्षणंतत्रैवसंस्थितः ॥ ९ ॥ अथांतरिक्षपदवींसिंचंतामिवरश्मिभिः ॥
दिव्यंविमानमानीतमद्राक्षंशिवकिंकरैः ॥ १० ॥ तस्मिन्रवींदुवह्नीनांतेजसामिवपंजरे ॥ विमानेसूर्यसंकाशानपश्यंशिवकिंकरान्
॥ ११ ॥ तेवैत्रिशूलखट्वांगटंकचर्मासिपाणयः ॥ चंद्रार्धभूषणाःसांद्रचंद्रकुंदोरुवर्चसः ॥ १२ ॥ किरीटकुंडलभ्राजन्महाहिवलयो
ज्ज्वलाः ॥ शिवानुगामयादृष्टाश्चत्वारःशुभलक्षणाः ॥ १३ ॥ तानापततआलोक्यविमानस्थान्सुविस्मितः ॥ उपसृत्यांतिकेवे
गादपृच्छंगगनेस्थितान् ॥ १४ ॥ नमोनमोवस्त्रिदशोत्तमेभ्यस्त्रिलोचनश्रीचरणानुगेभ्यः ॥ त्रिलोकरक्षाविधिमावहद्भ्यस्त्रिशूलचर्मा
सिगदाधरेभ्यः ॥ १५ ॥ विदिताहिमयायूयंमहेश्वरपदानुगाः ॥ इयंवोलोकरक्षार्थागतिराहोविनोदजा ॥ १६ ॥

धारण किये, गौरवर्ण, तेजयुक्त; सर्पराजके कंकणसे उज्ज्वल और शुभलक्षणसंपन्न साक्षात् शिवके समान चारपुरुषोंको मैंने देखा ॥१२॥१३॥ उनको आता
देख आश्चर्यसे मैंने शीघ्रतापूर्वक उनके पास जाकर पूंछा॥१४॥ और प्रणाम किया कि सब देवताओंमें तुम श्रेष्ठहो तुमको प्रणामहै, तुम शिवजीके चरणा
नुरागीहो त्रिलोकीकी रक्षा करतेहो, त्रिशूल, चर्म, असि और गदाको धारण करनेवाले हो ॥ १५ ॥ मुझे विदित है कि तुम शिवजीके पदानुगामी

हे यह तुम्हारा आगमन लोककी रक्षाके निमित्त वा आनन्दके निमित्त ॥ १६ ॥ वा सर्व प्राणियोकें पापशुद्धिके निमित्त, अथवा विजयके निमित्तहै, सो दया करके मुझसे कहो कि, आप यहां किसनिमित्त आयेहो ॥ १७ ॥ शिवजीके दूत बोले । कि, यह जो वृद्धा चांडाली मरनेको उद्यत तुम्हारे सन्मुख दीखतीहै. इसके लेनेको शिवजीकी आज्ञासे विमान लेकर आयेहैं ॥ १८ ॥ इसप्रकार शिवदूतोंके कहनेपर आश्चर्ययुक्त होकर मैने उनके हाथ जोडे और फिर पूंछा ॥१९॥ कि, यह घोर पापिनी और चांडालिनी इस दिव्य विमानपर चढ़नेको किसप्रकार समर्थ होसकतीहै, क्या कभी कुति

उतसर्वजनाघौघविजयायकृतोद्यमाः ॥ पूतकारुण्यतोमह्यंयस्माद्यूयमिहागताः ॥ १७॥ शिवदूताऊचुः ॥ एषाग्रेदृश्यतेवृद्धाचांडाली मरणोन्मुखी ॥ एतामानेतुमायाताःसंदिष्टाः प्रभुणावयम् ॥१८॥ इत्युक्तेशिवदूतैस्तैरपृच्छंपुनरप्यहम् ॥ विस्मयाविष्टचित्तस्तान्कृतांजलिरवस्थितः ॥ १९ ॥ अहोपापीयसीघोराचांडालीकथमर्हति ॥ दिव्यंविमानमारोढुंशुनीवाध्वरमंडलम् ॥ २० ॥ आजन्मतोऽशुचिप्रायांपापांपापानुगामिनीम् ॥ कथमेनांदुराचारांशिवलोकंनिनीषथ ॥२१॥ अस्यानास्तिशिवज्ञानंनास्तिघोरतरंतपः ॥ सत्यंनास्तिदयानास्तिकथमेनांनिनीषथ ॥ २२ ॥ पशुमांसकृताहारांवारुणीपूरितोदराम् ॥ जीवहिंसारतांनित्यंकथमेनांनिनीषथ ॥ २३ ॥

याभी यज्ञवेदीपर पदारोहण करसकतीहै ? ॥ २० ॥ जन्मसे अपवित्र, पापिनी, पापानुगामिनी. खोटे आचरण करनेवाली इस चांडालीको तुम किस पुण्यसे शिवलोकको लेजाओगे॥ २१ ॥ इसको शिवजीका ज्ञान नहीं, न इसने कोई घोर तप कियाहै. इसमें सत्य, दया नहीं. इसको शिवलोकमें किस प्रकार लेजाओगे ॥२०॥ पशुओंका मांस खानेवाली मदिरापान करनेवाली, सदा जीवहिंसा करनेवाली, इसको शिवलोकमें कैसे लेजाओगे ॥ २३ ॥

न तो इसने पंचाक्षरमंत्रका जप किया और न शिवजीका पूजन किया, न भगवान् शंकरका ध्यानकिया, फिर इसे शिवलोकमें किसप्रकार लेजाओगे॥ २४॥ न शिवरात्रिका व्रत किया, न प्राणियोंपर प्रीति करी, न इष्टापूर्त आदि यज्ञ किये, फिर इसको शिवलोकमें किसप्रकार लेजाओगे ॥२५॥ न तीर्थोंमें स्नान किया, न दान किये न व्रत किये इसको शिवलोकमें कैसे लेजाओगे ॥ २६ ॥ इसको देखना भी नहीं चाहिये और संभाषणादिकी तो कथा ही क्याहै.

नचपंचाक्षरीजप्तानकृतंशिवपूजनम् ॥ नध्यातोभगवाञ्छंभुःकथमेनांनिनीषथ ॥ २४ ॥ नोपोषिताशिवतिथिर्नकृतंभूतसौहृदम् ॥ नेष्टापूर्तादिकंवापिकथमेनांनिनीषथ ॥ २५ ॥ नचस्नातानितीर्थानिनदानानिकृतानिच ॥ नचव्रतानिचीर्णानिकथमेनांनिनीषथ ॥ २६ ॥ ईक्षणेपरिहर्त्तव्याकिमुसंभाषणादिषु ॥ सत्संगरहितांचंडांकथमेनांनिनीषथ ॥ २७ ॥ जन्मांतरार्जितंकिंचिदस्याःसुकृतमस्तिवा ॥ तत्कथंकुष्ठयक्ष्मणाकृमिभिःपरिभूयते ॥ २८ ॥ अहोईश्वरचर्येयंदुर्विभाव्याशरीरिणाम् ॥ पापात्मानोऽपिनीयंते कारुण्यात्परमंपदम् ॥ २९ ॥ इत्युक्तास्तेमयादूतादेवदेवस्यशूलिनः ॥ प्रत्यूचुर्मामथप्रीत्यासर्वसंशयभेदिनः ॥ ३० ॥ ॥ शिवदूता ऊचुः ॥ ॥ ब्रह्मन्सुमहदाश्चर्यंशृणुकौतूहलंयदि ॥ इमामुद्दिश्यचांडालींयदुक्तंभवताधुना ॥ ३१ ॥

सत्संगरहित इस चांडालीको शिवलोकमें किसप्रकार लेजाओगे ॥२७॥ पूर्वजन्ममें संचितकियाहुआ यदि इसका कोई पुण्य होता तो कुष्ठ, राजयक्ष्म और कीटोंके द्वारा क्यों खाईजाती ॥२८॥ अहो ईश्वरकी अपार महिमाहै, कि जो जानी नहींजाती, पापी पुरुषभी दयासे शिवलोकमें जातेहैं ॥२९॥ इस प्रकार देवोंके देव भगवान् शंकरके दूतोंसे मैंने कहा, तब संपूर्ण संदेहोंको दूर करनेवाले शिवजीके दूत प्रीतिपूर्वक मुझसे बोले॥ ३०॥ शिवजीके दूत बोले कि,

हे ब्रह्मन् ! इससमय इस चांडालीके उद्देशसे जो तुमने कहा, इसका बडा आश्चर्ययुक्त कौतूहल है. सुनो मैं कहताहूं ॥ ३१ ॥ यह पूर्वजन्ममें अतिसुन्दर पूर्णचन्द्रमाके समान मुखवाली सुमित्रानाम किसी ब्राह्मणकी कन्या थी ॥ ३२ ॥ पुष्पके समान जिसके कोमल अंगथे, केकयदेशके किसी मुख्य (श्रेष्ठ) ब्राह्मणकी कन्या थी ॥ ३३ ॥ संपूर्ण सुन्दर लक्षणयुक्त और साक्षात् कामदेवकी मूर्तिके समान पिताके घरमें बढतीहुई उस कन्याको देखकर सब मनुष्य विस्मित (मोहित) होतेथे ॥ ३४ ॥ वह दिन २ बढतीथी और बंधुजन उसका लालन करतेथे, कामदेवके महाधनुषके समान

आसीदियंपूर्वभवेकाचिद्ब्राह्मणकन्यका ॥ सुमित्रानामसंपूर्णसोमबिम्बसमानना ॥ ३२ ॥ उत्फुल्लमल्लिकादामसुकुमारांगलक्षणा ॥ कैकेयाद्द्विजमुख्यस्यकस्यचित्तनयासती ॥ ३३ ॥ तांसर्वलक्षणोपेतांरतेर्मूर्तिमिवापराम् ॥ वर्द्धमानांपितुर्गेहेवीक्ष्यासान्विस्मिताजनाः ॥ ३४ ॥ दिनेदिनेवर्धमानाबंधुभिर्लालिताभृशम् ॥ साशनैर्यौवनंभेजेस्मरस्येवमहाधनुः ॥ ३५ ॥ अथसाबंधुवर्गैश्चसमेतेनकुमारिका ॥ पित्राप्रदत्ताकस्मैचिद्विधिनाद्द्विजसूनवे ॥ ३६ ॥ साभर्त्तारमनुप्राप्यनवयौवनशालिनी ॥ कंचित्कालंशुभाचारारेमेबंधुभिरावृता ॥ ३७ ॥ अथकालवशात्तस्याःपतिस्तीव्ररुजार्दितः ॥ रूपयौवनकांतोपिपंचत्वमगमन्मुने ॥ ३८ ॥ मृतेभर्त्तरिदुःखेनविदग्धहृदयासता ॥ उवासकतिचिन्मासान्सुशीलविजितेंद्रिया ॥ ३९ ॥

शनैः २ वह कन्या यौवनवती हुई ॥ ३५ ॥ तब कुटुम्बियोंसमेत उसके पिताने विधिपूर्वक एक सुन्दर ब्राह्मणकुमारके साथ उसका विवाह करदिया ॥ ३६ ॥ नवयौवनवती वह भी पतिके साथ कुटुम्बसमेत कुछ कालतक संसारका आनन्द भोगतीरही ॥ ३७ ॥ कुछ समयके उपरान्त कालवश उसका पति रोगग्रस्त हुआ और कुछदिनोंमें अतिरूपवान् बुद्धिमान् वह उसका पति मृत्युको प्राप्तहुआ ॥ ३८ ॥ पतिके मरनेपर दुःखसे दग्ध हृदय

वाली वह नवयौवना कुछमहीनोंतक शीलयुक्त और जितेन्द्रिया रही ॥ ३९ ॥ किन्तु यौवनका भार अत्यन्त प्रादुर्भूत होनेलगा और कामदेवं सतानेलगा ॥ ४० ॥ उसके बंधुवर्ग और महोत्तमपुरुषोंने गुप्तरूपसे उसको शिक्षाभी दी। किन्तु कामदेवके वशीभूत हुई वह अपने मनको न रोकसकी ॥ ४१ ॥ रूपयौवनसंपन्न, कामदेवकी तीव्र व्यथासे युक्त वह विधवाभी जारकर्ममें रतहोगई अर्थात् व्यभिचार करनेलगी ॥ ४२ ॥ कुछ समयतक तो किसीने न जाना कि. यह व्यभिचारिणीहै, कुछ समयतक उसने अपने दुराचरणको छिपाये रक्खा ॥ ४३ ॥ किन्तु जब मुख पीला, कुच नीले

अथयौवनभारेणजृंभमाणेननित्यशः॥ बभूवत्द्दयंतस्याः कंदर्पपरिकंपितम् ॥ ४० ॥ सागुप्तावंधुवर्गेण शासितापिमहोत्तमैः॥ नशशाकमनोरोद्धुंमदनाक्रुष्टमंगना ॥ ४१ ॥ सातीव्रमन्मथाविष्टारूपयौवनशालिनी ॥ विधवापिविशेषेणजारमार्गरताभवत् ॥ ४२ ॥ नज्ञाताकेनचिदपिजारिणीतिविचक्षणा ॥ जुगूहात्मदुराचारंकंचित्कालमसत्तमा ॥ ४३ ॥ तांदोहदसमाक्रांतांघननीलमुखस्तनीम् ॥ कालेनबंधुवर्गोपिबुबोधविटदूषिताम् ॥ ४४ ॥ इतिभीतोमहाक्लेशाश्चिंतांलेभेदुरत्ययाम् ॥ स्त्रियःकामेननश्यंतिब्राह्मणाहीनसेवया ॥ ४५ ॥ राजानोब्रह्मदंडेनयतयोभोगसंग्रहात् ॥ लीढंशुनातथैवान्नंसुरयावार्पितंपयः ॥ ४६ ॥ रूपंकुष्ठरुजाविप्रंकुलंनश्यतिकुस्त्रिया ॥ इतिसर्वेलोच्यसमेताःपतिसोदराः ॥ ४७ ॥

देखपड़े तब उसके बंधुवर्ग विचारनेलगे. कि यह जारसे दूषितहै ॥ ४४ ॥ इसप्रकार डरकर महाक्लेश और चिन्ता करनेलगे कि, स्त्रियें कामदेवसे नष्ट होतीहैं, ब्राह्मण हीनवर्णकी सेवा करनेसे नष्ट होतेहैं ॥ ४५ ॥ राजा ब्राह्मणोंपर दंड करनेसे नष्ट होतेहैं और संन्यासी भोग संग्रह करनेसे नष्ट होजातेहैं, जैसे कुत्तेका उच्छिष्ट अन्न, मद्यके पात्रमें रक्खाहुआ जल वा दूध दूषित होताहै ॥ ४६ ॥ रूपको कुष्ठ और रोग कलंकित करदेताहै, इसीप्रकार अच्छे

कुलको खोटी (दुराचारिणी) स्त्रियें कलंकित करदेतीहै, इसप्रकार उसके बंधुओने विचार ॥ ४७ ॥ उसको अति अनादरसे वाल पकड़करग्रामके बाहर निकालदिया और सब बंधुओंने जातिसे पतित करनेको उसके निमित्त घटोत्सर्गकरदिया ॥ ४८ ॥ ग्रामके बाहर फिरतीहुई उसको किसी एक शूद्रने देखा, ऊँचेहै पयोधर जिसके ऐसी और सुन्दर मुखवाली उस ब्राह्मणकी स्त्रीको देखकर ॥ ४९ ॥ और समझाकर वह शूद्र अपने घर लेगया, वह स्त्री उसकी मुख्य स्त्री होकर रही और दिनरात ॥ ५० ॥ कुछसमयतक उससे रमण किया और उसके घर रहकर मांस खाया और मद्य

तत्यजुर्गोत्रतोदूरंगृहीत्वासकचग्रहम् ॥ सघटोत्सर्गमुत्सृष्टासानारीसर्वबंधुभिः ॥ ४८ ॥ विचरंतीबहिर्ग्रामाद्दृष्टाशूद्रेणकेनचित् ॥ सतां दृष्ट्वावरारोहांपीनोन्नतपयोधराम् ॥ ४९ ॥ गृहंनिनायसाम्नाचविधवांशूद्रनायकः ॥ सानारीतस्यमहिषीभूत्वातेनदिवानिशम् ॥ ५० ॥ रममाणाक्वचिद्देशे न्यवसद्गृहवल्लभा ॥ तत्रसापिशिताहारानित्यमापीतवारुणी ॥ ५१ ॥ लेभेसुतंचशूद्रेणरममाणारतिप्रिया ॥ कदा चिद्भर्तरिक्वापियातेपीतसुरातुसा ॥ ५२ ॥ इयेषपिशिताहारंमदिरामदविह्वला ॥ अथमेषेषुबद्धेषुगोभिःसहवहिर्व्रजे ॥ ५३ ॥ ययौकृ पाणमादायसातमोघेनिशामुखे ॥ अविमृश्यमदावेशान्मेषबुद्ध्यामिषप्रिया ॥ ५४ ॥ एकंजघानगोवत्संक्रोशंतंनिशिदुर्भगा ॥ निहतं गृहमानीयज्ञात्वागोवत्समंगना ॥ ५५ ॥

पान किया ॥ ५१ ॥ कछ समयके उपरान्त उस रतिप्रिया जारिणीके पुत्र उत्पन्न हुआ, किसीसमय पतिके कही जानेपर उसने मद्यपान किया ॥ ५२ ॥ मदिराके मदसे विह्वलहुई उसको मांस खानेकी इच्छा हुई, तब घरके बाहर जहाँ गौ और मेढे बँधे हुएथे उस गोठमें ॥ ५३ ॥ अंधकारसे व्याप्त रात्रिके समय खड्ग हाथमें लेकर गई और मांसप्रिया उसने मदके आवेशसे मेढा है यह इस बुद्धिसे विना विचारकियेही ॥ ५४ ॥ चिल्लातेहुए एक

गौके बछड़ेको मारदिया और घरले आई देखा तो वह गौका बछड़ाहै॥ ५५ ॥ ऐसा देखकर डरी और किसी पुण्यकर्मसे उसने शिव शिव इसवचनका उच्चारण किया, मांस और मदिराकी इच्छावाली उसने मुहूर्तमात्र तो ध्यान किया, ॥ ५६ ॥ किन्तु पीछे उसी गोवत्सका छेदन करके मनवांछित भोजनकिया, गौके बछडेके आधे शरीरको तो आप खालिया ॥ ५७ ॥ और आधे शरीरको घरके बाहर रखकर छलसे चिल्लाने लगी कि, अहो व्यांघ्रने गोठमें, इस गोवत्सको खालिया ॥५८॥ इसप्रकार उसका चिल्लाना सबके घरोंमें सुनाई आया और सब शूद्र आकर उसके निकट स्थित होगये ॥५९॥

भीताशिवंशिवेत्याहकेनाचित्पुण्यकर्मणा ॥ सामुहूर्त्तमितिध्यात्वापिशितासवलालसा ॥ ५६ ॥ छित्त्वातमेवगोवत्संचकाराहारमीप्सितम् ॥ गोवत्सार्धशरीरेणकृताहाराथसापुनः ॥ ५७ ॥ तदर्धंदेहंनिक्षिप्यबहिश्चुक्रोशकैतवात् ॥ अहोव्याघ्रेणभग्नोयं जग्धोगोवत्सकोव्रजे ॥ ५८ ॥ इतितस्याःसमाक्रंदःसर्वगेहेषुशुश्रुवे ॥ अथसर्वेशूद्रजनाःसमागम्यांतिकेस्थिताः ॥ ५९ ॥ हतंगोवत्समालोक्यव्याघ्रेणेति शुचंययुः ॥ गतेषुतेषुसर्वेषुव्युष्टायांचततोनिशि ॥ ६० ॥ तद्भर्तागृहमागत्यदृष्टवान्गृहविड्वरम् ॥ एवंबहुतिथेकालेगतेसाशूद्रवल्लभा ॥ ६१ ॥ कालस्यवशमापन्नाजगामयममंदिरम् ॥ यमोपिधर्ममालोक्यतस्याःकर्मचपौर्विकम् ॥ ६२ ॥ निर्वर्त्यनिरयावासाच्चक्रेचंडालजातिकाम् ॥ सापिभ्रष्टायमपुराच्चांडालीगर्भमाश्रिता ॥ ६३ ॥

और व्याघ्रके द्वारा मरेहुए गोवत्सको देखकर शोचकरनेलगे, उन सबके चलेजाने और रात्रिके बीतनेपर ॥ ६० ॥ दूसरे दिन उसका पति आया और उसको देख कुछ शोचकर चुप रहा किन्तु इस छलको उसने भी न जाना, इस प्रकार बहुत समय बीतनेपर वह शूद्रप्रिया॥ ६१ ॥ कालके वशीभूत होकर यमलोकको गई यमराजने उसके पूर्वकर्म और धर्म्म देखे तो इसने कोई सुकृत नहीं किया था ॥ ६२ ॥ तब अवधि पूरीहोनेपर नरकसे

लौटाकर चांडालकी जाति दी, वह भी नरकसे पतित होकर किसी एक चांडलीके गर्भमें आई ॥ ६३ ॥ चांडलीके गर्भसे उत्पन्न जन्मसे अंधी अतिकृष्णवर्ण थी, किसी न किसी देशमें रहकरभी उसका पिता ॥ ६४ ॥ ऐसी उस कन्याकाभी पोषण करतारहा, अभोज्य अर्थात् जिसको कोई न खाय ऐसे कुत्सित और कत्तोंसे चाटेहुए अपवित्र अन्नसे ॥ ६५ ॥ तथा पीनेके अयोग्यरसोंसे दिनदिन उसका पोषण किया, वह जन्मांध तो थीही बाल्यावस्थामेंही कुछ समयके बीतनेपर कुष्ठरोगसेभी पीड़ित होनेलगी ॥ ६६ ॥ उस दुर्भगाको

ततोबभूवजात्यंधाप्रशांतांगारमेचका ॥ तत्पिताकोपिचांडालोदेशेकुत्रचिदास्थितः ॥ ६४ ॥ तांतादृशीमपिसुतांकृपयापर्यपोषयत् ॥
अभोज्येनकदन्नेनशुनालीढेनपूतिना ॥ ६५ ॥ अपेयैश्चरसैर्मात्रापोषितासादिनेदिने ॥ जात्यंधासापिकालेनबाल्येकुष्ठरुजार्दिता ॥
॥ ६६ ॥ ऊढानकेनचिद्वापिचांडालेनातिदुर्भगा ॥ अतीतबाल्येसाकालेविध्वस्तपितृमातृका ॥ ६७ ॥ दुर्भगेतिपरित्यक्ताबंधुभिश्च
सहोदरैः ॥ ततःक्षुधार्दितादीनाशोचंतीविगतेक्षणा ॥ ६८ ॥ गृहीतयष्टिःकृच्छ्रेण संचचालसलोष्टिका ॥ पत्तनेष्वपिसर्वेषुयाचमानादि
नेदिने ॥ ६९ ॥ चांडालोच्छिष्टपिंडेनजठराग्निमतर्पयत् ॥ एवंकृच्छ्रेणमहतानीत्वासुबहुलंवयः ॥ ७० ॥

किसी चांडालनेभी ग्रहण न किया, अर्थात् उसका विवाहभी न हुआ, उसकी बाल्यावस्था बीतनेपर मातापिताभी मरगये ॥ ६७ ॥ और उसके सहोदर बंधुजनोंनेभी दुर्भगा जान त्यागदिया, नेत्रहीन वह चांडाली क्षुधा (भूँख) से व्याकुल होकर शोचनेलगी ॥ ६८ ॥ और कठिनतासे लाठी हाथमें लियेहुए लाठीके सहारे सब देशोंमें दिनदिन भीख मांगने लगी ॥ ६९ ॥ और चांडालोंके उच्छिष्ट अन्नसे अपना उदर पूर्ण करती

थी, इसप्रकार अति कठिनाईसे उसकी बहुत अवस्था होगई ॥७०॥ उसके सब अंग वृद्धावस्थाग्रस्त होगये, इसकारण उसको बहुत दुःख होनेलगा,
अन्न, पान और वस्त्रहीन उसने महाजनोंको ॥ ७१ ॥ शिवरात्रि उत्सव आनेपर मार्गमें जाते देखा, उस देवयात्रामें अनेक देशोंसे आते हुए
॥ ७२ ॥ अग्निहोत्री ब्राह्मण और सपत्नीक महात्मा, हाथी, घोडे रथ और रणवास समेत राजा ॥ ७३ ॥ और अनेक कुटुम्बी शब्दकरतेहुए,
सवारी और छत्रादिसे शोभित तथा अन्य वैश्य, शूद्र और हजारों संकीर्णजाति ॥७४॥ हँसतेहुए, गातेहुए, कहीं नाचतेहुए, दौडतेहुए, सूँघतेहुए, पीते

जरयाग्रस्तसर्वांगीदुःखमापदुरत्ययम् ॥ निरन्नपानवसनासाकदाचिन्महाजनान् ॥ ७१ ॥ आयास्यंत्यांशिवतिथौगच्छतोबुबुधेध्व
गान् ॥ तस्यांतुदेवयात्रायांदेशदेशांतयायिनाम् ॥ ७२ ॥ विप्राणांसाग्निहोत्राणांसस्त्रीकाणां महात्मनाम् ॥ राज्ञाचसावरोधानांसह
स्तिरथवाजिनाम् ॥ ७३ ॥ सपरीवारघोषाणांयानच्छत्रादिशोभिनाम् ॥ तथान्येपांचविट्शूद्रसंकीर्णानांसहस्रशः ॥ ७४ ॥ हसतांगा
यतांक्वापिनृत्यतामथधावताम् ॥ जिघ्रतांपिबतांकामाद्गच्छतांप्रतिगर्जताम् ॥ ७५ ॥ संप्रयाणेमनुष्याणांसंभ्रमःसुमहानभूत् ॥ इति
सर्वेपुगच्छत्सुगोकर्णंशिवमंदिरम्॥७६॥पश्यंतिदिविजाःसर्वेविमानस्थाःसकौतुकाः ॥ अथेयमपिचांडालीवसनाशनतृष्णया ॥ ७७ ॥
महाजनान्याचयितुंसंचचालशनैःशनैः ॥ करावलंबेनान्यस्याःप्राग्जन्मार्जितकर्मणा ॥ ७८ ॥

हुए, कामनासे जातेहुए, गर्जतेहुए ॥ ७५ ॥ इसप्रकार मनुष्योंके गमनको देखकर बड़ा आश्चर्य होताथा इसप्रकार सब गोकर्ण शिवमंदिरकी यात्रा कर
रहेथे ॥ ७६ ॥ और विमानमें स्थित, कौतुक युक्त देखतेहुए सब देवताभी यात्रा कररहेथे, इसप्रकार उनको देखकर यह चांडालीभी वस्त्र भोजन
और तृष्णासे व्याकुल ॥ ७७ ॥ उनसे भीख मांगनेके निमित्त पूर्वजन्मसे संचितकिये कर्मसे किसी दूसरेके हाथके सहारे शनैःशनैः गोकर्णको

चलदी ॥ ७८ ॥ और कुछ दिन पीछे गोकर्णमें जापहुँची, और मार्गके निकट भीख मांगनेके निमित्त हाथ फैलाकर बैठगई ॥ ७९ ॥
वहाँ पथिकोंसे दीनवचन कहकर बारबार भीख माँगनेलगी; कि, हे पथिकजनों ! पूर्वजन्मके संचितपापोंके द्वारा पीडित हुई मेरे ऊपर ॥ ८० ॥
भोजनमात्रके दानसे दयाकरो, अर्थात् मुझे भोजनदो, तुम दुःखियोंपर दया करतेहो, परम आशीर्वाद देतेहो ॥ ८१ ॥ तुम बहुत पुण्यात्मा हो,
हे महाजनों ! वस्त्रहीन और पृथ्वीपर सोतीहुई मेरे ऊपर कृपाकरो ॥ ८२ ॥ महापापमें डूबीहुई और महाशीत और धूपसे दुखी तथा महा

दिनैःकतिपयैर्यातीगोकर्णक्षेत्रमाययौ ॥ ततोविदूरेमार्गस्यविपण्णाविवृतांजलिः ॥ ७९ ॥ याचमानामुहुःपांथान्वभापेक्रपणंवचः ॥
प्राग्जन्मार्जितपापौघैःपीडितायाश्चिरंमम॥८०॥आहारमात्रदानेनदयांकुरुतभोजनाः ॥ त्रातारःपरमार्तानांदातारःपरमाशिपाम्॥८१॥
कर्तारोबहुपुण्यानांदयांकुरुतभोजनाः ॥ वसनाशनहीनायांस्वपितायांमहीतले ॥८२॥ महापांसुनिमग्नायांदयांकुरुतभोजनाः ॥ महा
शीतातपार्त्तायांपीडितायांमहारुजा ॥ ८३ ॥ अंधायांमयिवृद्धायांदयांकुरुतभोजनाः ॥ चिरोपवासदीप्तायांजठराग्निविवर्धनैः ॥८४॥
संदह्यमानसर्वांग्यांदयांकुरुतभोजनाः॥ अनुपार्जितपुण्यायांजन्मांतरशतेष्वपि ॥८५॥ पापायांमंदभाग्यायांदयांकुरुतभोजनाः ॥ एवम
भ्यर्थयंत्यास्तुचांडाल्याःप्रसृतेंजलौ॥८६॥ एकःपुण्यतमःपांथःसोक्षिपद्बिल्वमंजरीम् ॥ तामंजलौनिपतितांसाविमृश्यपुनःपुनः ॥८७॥

रोगसे पीडित मेरे ऊपर हे महाजनों ! दया करो ॥ ८३ ॥ मुझ अंधी, वृद्धा और बहुत कालसे उपवास करनेसे मेरी जठराग्नि बढगई है, इसकारण अन्नदान
देकर मेरे ऊपर दयाकरो ॥ ८४ ॥ उस जठराग्निसे मेरे सब अंग जलतेहैं, हे महाजनो ! मेरे ऊपर दया करो, सैकडों जन्मांतरोंमेंभी मैंने पुण्य नहीं कियाहै ॥ ८५ ॥
पापिनी और मंदभागिनी मेरे ऊपर दया करो. इसप्रकार हाथ फैलाकर उसचांडालीके प्रार्थना करनेपर ॥ ८६ ॥ एक पुण्यात्मा पथिकने

उसके हाथपर बिल्वपत्र रखदिया, हाथमें रक्खेहुए उस विल्वपत्रको देखकर उसने बारंबार विचारकिया, कि यह क्या वस्तु है ॥८७॥ और विना खानेकी वस्तु समझकर दूर फेंकदिया, उसके हाथसे फेंकाहुआ विल्वपत्र रात्रिमें ॥ ८८ ॥ भाग्यसे किसी शिवलिंगपर गिरगया. और शिवचतुर्दशी के दिन उसने बारंबार अनेक पथिकोंसे भीख माँगी ॥ ८९ ॥ किन्तु दैवयोगसे याचना करनेपर भी उसको कुछ प्राप्त न हुआ इसप्रकार उसने भद्र कालीके पृष्ठभागमें रहकर वह रात्रिविताई ॥ ९० ॥ उससे आधी दूर कुछ एक उत्तरकी ओर ग्रामको प्रातःकाल आशा छोडे शोकसे अतिव्याकुल

अभक्ष्येत्येवमत्वाथदूरेप्राक्षिपदातुरा ॥ तस्याःकरेणनिर्मुक्तारात्रौसाविल्वमंजरी ॥ ८८ ॥ पपातकस्यचिद्दिष्ट्याशिवलिंगस्यमस्त के ॥ सैवंशिवचतुर्दश्यांरात्रौपांथजनान्मुहुः ॥ ८९ ॥ याचमानापियत्किंचिन्नलेभेदैवयोगतः ॥ तत्रोषितानयारात्रिर्भद्रकाल्यास्तुपृष्ठ तः ॥ ९० ॥ किंचिदुत्तरतःस्थानंतदर्धेनातिदूरतः ॥ ततः प्रभातभ्रष्टाशाशोकेनमहताप्लुता ॥ ९१ ॥ शनैर्निववृतेदीनास्वदेशायैवके वला ॥ श्रांताचिरोपवासेननिपतंतीपदेपदे ॥ ९२ ॥ क्रंदंतीबहुरोगार्तावेपमानाभृशातुरा ॥ दह्यमानार्कतापेननम्रदेहासयष्टिका ॥९३॥ अतीत्यतावतींभूमिंनिपपातविचेतना ॥ अथविश्वेश्वरःशंभुःकरुणामृतवारिधिः ॥ ९४ ॥

॥ ९१ ॥ दीन होकर अकेलीही अर्थात् विना किसी दूसरेके सहारे शनैः शनैः अपने देशको लौटी, वहुत कालसे भोजन न मिलनेके कारण थकीहुई पदपदपर गिरनेलगी ॥ ९२ ॥ अनेक रोगोंसे व्याकुल होकर रोई और वहुत आतुर होकर बारंबार कांपनेलगी, सूर्यके तापसे जलतीहुई,लाठी के सहारे झुकेहुए शरीरसे चली ॥ ९३ ॥ वहाँसे यहाँतक चलकर मूर्च्छित होकर गिरपडी तव करुणा और अमृतके समुद्र विश्वेश्वर

शंकरने ॥ ९४ ॥ विमान लेकर इसके लानेकेनिमित्त हमको भेजा है, इसप्रकार इस चांडालीका यह आख्यान यहाँ तुमसे कहा ॥ ९५ ॥ हे महामते ! गौतमऋषि ! दीनोंपर शिवजीकी दयालुता दिखाई, कर्मोंकी इसविचित्र गतिको देखो ॥ ९६ ॥ कि, यह अधमा चांडाली भी परम स्थानं शिवलोकमें गमन करतीहै, क्योंकि पूर्वजन्ममें इसने अन्नादिका दानभी नहीं किया ॥ ९७ ॥ इसी कारण भूँख, प्यास आदि क्लेशोंसे यह यहाँ पीडित हुई मदकेवेग अंधीहोकर जो इसने तीक्ष्ण पाप किया ॥ ९८ ॥ उस कर्मसे यह इस जन्ममें अंधीहुई पूर्वजन्ममें जो इसने जान

एनामानयतेत्यस्मान्युयुजेसाविमानकान् ॥ एषाप्रवृत्तिश्चांडाल्यास्तवेहपरिकीर्त्तिता ॥९५॥ यथासंदर्शिताशंभोःकृपणेपुकृपालुता ॥ कर्मणःपरिपाकोत्थांगतिंपश्यमहामते ॥९६॥ अधमापिपरंस्थानमारोहतिनिरामयम् ॥ यदेतयापूर्वंभवेनान्नदानादिकंकृतम् ॥९७॥ क्षुत्पिपासादिभिःक्लेशैस्तस्मादिहनिपीडयते ॥ यदेषामदवेगांधाचक्रेपापंमहोल्बणम् ॥९८॥ कर्मणातेनजात्यंधाबभूवात्रैवजन्मनि ॥ अपिविज्ञायगोवत्संयदेषाभक्षयत्पुरा ॥ ९९ ॥ कर्मणातेनचांडालीबभूवेहविगर्हिता ॥ यदेषास्वपथंहित्वाजारमार्गंरतापुरा ॥१००॥ तेनपापेनमहताबहुकुष्ठव्रणान्विता ॥ कामार्त्तायदियंस्वैरंशूद्रेणरमितापुरा ॥ १ ॥ महासृक्पूयकृमिभिःपीडयतेतेनपाप्मना ॥ यदेतयापूर्वंभवेसुरापीताविमूढया ॥ २ ॥

कर भी गोवत्सका मांस खाया ॥ ९९ ॥ उस कर्मसे यह इस जन्ममें निन्दित चांडाली हुई, और पूर्वजन्ममें जो इसने अपने धर्मको छोडकर परपुरुषमें गमन किया ॥ १०० ॥ उस बडे पापकर्मसे इसके कुष्ठ और व्रण (फोडे) हुए, कामसे विह्वल होकर जो इसने पूर्वजन्ममें स्वच्छन्दतासे शूद्रके साथ रमण किया ॥ १०१ ॥ उस पापसे यह बडे रुधिर, राध और कृमियोंसे पीडित हुई, पूर्वजन्ममें जो

इस मूर्खाने सुरापान किया ॥ १०२ ॥ उस पापसे महायक्ष्मा, दुःख और हृदयके शूलोंसे पीडित हुई, हे मुनिश्रेष्ठ ! यहांही सब मनुष्योंके पापोंको ज्ञानी, महात्मापुरुष जान लेतेहैं, इस जन्ममें जो बहुत रोगयुक्त, धन और पुत्रहीन ॥१०३॥१०४॥ दुर्लक्षण, क्लेशयुक्त, याचक और लाजरहित हैं तथा अन्न, वस्त्र, पान, शयन, भषण और विघासे ॥ १०५ ॥ हीन हैं विरूप (कुरूप) अंगहीन अर्थात् काणे, कुवडे हैं विद्या हीन उच्छिष्टभोजी, दुर्भाग्य, निन्दित और जो दूसरोंके सेवक हैं ॥ १०६ ॥ इन्होंने पूर्वजन्ममें वडे पाप कियेहैं. इस प्रकार विचार और मनु

महायक्ष्मार्तिहृच्छूलैःपीडयतेतेनपाप्मना ॥ अत्रैवसर्वमर्त्येषुपापचिह्नानिकृत्स्नशः ॥ ३ ॥ लक्ष्यंतेमुनिशार्दूलसविवेकैर्महात्मभिः ॥
अत्रयेबहुरोगार्त्तायेपुत्रधनवर्जिताः ॥४॥ येचदुर्लक्षणक्लिष्टायाचकाविगतह्रियः ॥ वासोन्नपानशयनभूषणाभ्यंजनादिभिः ॥५॥ हीना
विरूपानिर्विद्याविकलांगाः कुभोजनाः ॥ येदुर्भाग्यानिंदिताश्चयेचान्येपरसेवकाः ॥ ६ ॥ एतेपूर्वभवेसर्वेसुमहत्पापकारिणः ॥ एवंवि
मृश्ययत्नेनदृष्ट्वालोकजनस्थितिम् ॥ ७ ॥ बुधोनकुरुतेपापंयदिकुर्यात्सआत्महा ॥ देहोयंमानुषोजंतोर्बहुकर्मैकभाजनम् ॥ ८ ॥
सदासत्कर्मसेवेतदुष्कर्मसततंत्यजेत् ॥ पुण्यंसुखार्थीकुर्वीतदुःखार्थीपापमाचरेत्॥९॥ द्वयोरेकतरंलोकेगृह्णीतकुशलोजनः॥ इमंमानुषमा
श्रित्यदेहंपरमदुर्लभम् ॥ ११० ॥

ष्योंकी स्थितिको प्रयत्नपूर्वक देखकर ॥१०७॥ ज्ञानी पुरुष पाप नहीं करता यदि करें तो उसको आत्महत्याका पाप लगताहै. यह मनुष्यशरीर सत्कर्म करनेके निमित्त है ॥१०८॥ सदा सत्कर्मका सेवन करै. दुष्कर्मको सदा त्यागे, यदि सुखकी इच्छा हो तो पुण्यकर्म सेवन करे और दुःखकी इच्छा हो तो पापकर्म करे ॥१०९॥ चतुर पुरुषको चाहिये कि, इन (पाप पुण्य) दोनोंमेंसे एक(पुण्य)को ग्रहण करे, क्योंकि यह मनुष्य शरीर परम दुर्लभहै॥११०॥

इसकारण इस मनुष्य शरीरको पाकर अपनी आत्माके हितार्थ किसी एक देवका आश्रय अवश्य लेवै, निरन्तर सब पाप करताहुआ पुरुष ॥ १-११ ॥
बुद्धिपूर्वक शिवजीका ध्यान करनेसे सम्पूर्ण पापोंसे छूट जाताहै, पूर्वजन्ममें मरकर जब यह चांडाली यमलोकमें गई ॥ ११२ ॥ तब यमराजकी
सभामें बड़ा वितर्क (विचार) हुआ कि, यद्यपि इसका ब्राह्मणकुलमें जन्म हुआ किन्तु आचरण इसने अच्छे नहीं किये ॥ ११३ ॥ -इस कारण
हम इसको यहाँ लाये हैं, अब यह नरकमें जाय कि, नहीं, बाल्यावस्थामें इसने लेशमात्र भी पुण्य किया है कि, नहीं ॥ ११४ ॥ इन सब बातों

अयमात्महितात्कंचिद्देवमेकंसमाश्रयेत् ॥ अथपापानिसर्वाणिकुर्वन्नपिसदानरः ॥११॥ शिवमेकमतिर्ध्यायेत्ससंतरतिपातकम्॥ मृतापूर्वं भवेत्त्वेषायदाप्राप्तायमालये ॥१२॥ तदावितर्कःसुमहानासीद्यमसभासदाम्॥यद्यपिब्राह्मणीत्वेषासत्कुलाचारदूषिता ॥१३॥ अतोस्माभिरिहानीतानिरयंयातुवानवा॥ अनयासाधितोबाल्येपुण्यलेशोस्तिवानवा ॥१४॥ अथापिसुविमृश्यैवंधार्योदंडोत्रनान्यथा॥ बहुजन्मसहस्रेषुकृतपुण्यावपाकितः ॥१५॥ नृणांब्रह्मकुलेजन्मलभ्यतेहिकथंचन ॥ अतोस्याःपूर्वपूर्वेषुतत्कृघंनास्तिजन्मसु ॥१६॥ अन्यथासत्कुले जन्मकथमेषाप्रपद्यते ॥ अत्रैवजन्मन्यनयाकृतमंहोदुरत्ययम् ॥ १७ ॥ अथापिनरकावासंप्रायशोनेयमर्हति ॥ किंतुगोवत्सकंहत्वाविमृश्यागतसाध्वसा ॥ १८ ॥

को विचारकर इसको दण्ड देना चाहिये, कारण कि, अनेक पूर्वजन्मोंके पुण्यसे ॥ ११५ ॥ मनुष्योंका ब्राह्मणकुलमें जन्म होताहै किसप्रकार नहीं
इस कारण ज्ञात होता है कि, इसने पूर्वजन्मोंमें पुण्य किया है, ॥ ११६ ॥ नही तो श्रेष्ठ ब्राह्मणकुलमें इसका जन्म किसप्रकार होसकता था, जो कुछ
पाप किया है, वह इसीजन्ममें किया है ॥ ११७ ॥ कि, गोवत्सको मारकर इसने विचारा और पूर्वजन्मसे संचित कियेहुए कर्मसे शिवशिव, इसप्रकार

उच्चारण किया. यह नाम सम्पूर्ण पापोंको नष्ट करदेता है, इसकारण यह नरकमें नहीं जायगी ॥ ११८ ॥ ११९ ॥ जो भक्तिपूर्वक शिव, इस
नामका उच्चारण करता है. वह सीधा शिवलोकको चलाजाता है, एकही जन्ममें इसने कठिन पाप किया है ॥ १२० ॥ इस कारण क्रमसे इसको
चांडालीकी योनि प्राप्त होवे, मनुष्योंके लिये इस संसारमें इससे अधिक और क्या नरक होगा ॥१२१॥ कि, अनेक क्लेशोंके समूहोंसे बारंबार पीडा होती
है दुष्क्लेश, जन्मसे दरिद्रता, शरीरमें अनेक रोग और मूढता ॥ १२२ ॥ यह एक एक भी नरक हैं, सबका तो ठिकानाही क्या है, पूर्वजन्मके पुण्य

एषाशिवशिवेत्याहप्राग्जन्मार्जितकर्मणा ॥ यदेषापापविच्छित्त्यैसकृदप्युरुमंगलम् ॥ १९ ॥ शिवनामवदेद्भक्त्यातर्हिगच्छेत्परंपदम् ॥
एकजन्मकृतस्यास्यदारुणस्यापियत्फलम् ॥१२०॥ क्रमेणानुभवत्वेषाभूत्वाचांडालजातिका ॥ अस्मादन्यतमःकोवानरकोस्तिनृणा
मिह ॥२१॥ अनेकक्लेशसंघातैर्यन्मुहुःपरिपीडनम् ॥ दुष्कुलेजन्मदारिद्र्यंमहाव्याधिर्विमूढता ॥२२॥ एकैकएवनरकःसर्वेवाचाथर्किं
पुनः॥ प्राग्जन्मपुण्यभारेणयन्नामविवशाब्रवीत्॥२३॥ तेनैषान्यभवेभूरिपुण्यमंतेकरिष्यति ॥ तेनपुण्येनमहतानिस्तीर्याघौघयातनाः॥
॥ २४ ॥ विचार्यस्वयमेवेशोयद्युक्तंतत्करोतुसः ॥ एवंवैवस्वतपुरेसवैर्यमपुरोगमैः ॥ विमृश्यचित्रगुप्ताद्यैरियमुक्तापतद्भुवि ॥ २५ ॥
आदौयदेषाशिवनामनारीप्रमादतोवाप्यसतीजगाद ॥ तेनेहभूयःसुकृतेनशंभोर्विल्वांकुराराधनपुण्यमाप ॥ २६ ॥

से जो इसने शिवजीका नामोच्चारण किया ॥ १२३ ॥ उस पुण्यके प्रतापसे यह दूसरे जन्ममें वृद्धावस्थाके प्राप्त होनेपर एक बड़ा भारी पुण्य करेगी,
उस बड़े पुण्यके प्रतापसे इसके संपूर्ण पापोंकी यातना दूर होजायगी ॥ १२४ ॥ और यह शिवलोकमें जायगी. वहां जो योग्य होगा शिवजी स्वयं
विचार कर करेंगे, यह विचारकर यमपुरमें यमराजकी सभामें बैठेहुए ॥ १२५ ॥ चित्रगुप्त आदिकोंने इसको चांडालयोनिमें जानेकेनिमित्त कहा पूर्व

जन्ममें जो इसने प्रमादसे ही शिवनाम उच्चारण किया था, उसी पुण्यके प्रभावसे शिवजीके ऊपर बिल्वपत्रद्वारा आराधनरूप पुण्य प्राप्त हुआ॥ १२६॥ श्रीगोकर्णमें इसने शिवचतुर्दशीके दिन व्रत और शिवजीका पूजन किया तथा रात्रिमें जागरण और बिल्वपत्र चढाया ॥ १२७ ॥ निष्प्रयोजन (बेकाम) जो इसने यह पुण्य किया उसका फल आज यह तुम्हारे संमुख भोग रहीहै ॥ १२८ ॥ गौतम मुनि बोले, कि, इस प्रकार कहकर

श्रीगोकर्णेशिवतिथावुपोष्यशिवमस्तके॥ कृत्वाजागरणंह्येषाचक्रेबिल्वार्पणंनिशि ॥२७॥ अकामतःकृतस्यास्यपुण्यस्यैवचयत्फलम्॥ अद्यैवभोक्ष्यतेसेयंपश्यतस्तवनोमृषा ॥ २८ ॥ ॥ गौतमउवाच ॥ ॥ इत्युक्त्वाशिवदूतास्तेतस्याश्चांडालयोनितः ॥ जीवलेशं समाकृष्ययुयुजुर्दिव्यतेजसा ॥२९॥ तांदिव्यदेहसंक्रांतांतेजोराशिसमुज्ज्वलाम् ॥ विमानेस्थापयामासुःप्रीतास्ते शिवकिंकराः॥१३०॥ अथसापरमोदाररूपलावण्यशालिनी ॥ दिव्यभूषणदीप्तांगीदिव्यांबरविधारिणी ॥ ३१ ॥ देहेनादिव्यगंधेनादिव्यतेजोविकाशिनी ॥ दिव्यमाल्यावतंसेनविरराजविमानगा ॥ ३२ ॥ रत्नच्छत्रपताकाद्यैर्गीतवादित्रनिस्वनैः ॥ मध्येसाशिवदूतानांमोदमानाव रानना ॥ ३३ ॥

शिवजीके दूत चांडालयोनिसे उसके जीवमात्रको लेकर दिव्य तेजमें मिलातेहुए ॥ १२९ ॥ दिव्य देहसे युक्त, तेजसमूहसे उज्वल उस चांडालीको प्रसन्नतापूर्वक उन शिवजीके किन्नरोंने विमानमें स्थापन किया ॥१३०॥ परमउदार, रूप और लावण्यसंपन्न, दिव्य भूषणोंसे युक्त, दिव्य वस्त्र धारण कियेहुए ॥ १३१ ॥ दिव्य गन्धयुक्त देह और तेजसे प्रकाशित, दिव्य मालाओंसे युक्त विमानमें वह चांडाली शोभा पातीहुई ॥१३२॥ रत्न, छत्र

पताकाआदि और गीत वादित्रके शब्दोंसे युक्त और शिवानुचरोंके बीचमें वह सुन्दरमुखवाली चांडाली प्रसन्न होतीहुई ॥ १३३ ॥ बारं बार स्मरण करके उसने अपने जन्मोंका अनुभव किया. और स्वप्नके समान उसने महाआश्चर्य देखा, डरी और उठी ॥ १३४ ॥ तथा विचारा कि, मैं कौन हूँ यह सिद्ध कौन हैं, और यह कौन सुन्दर लोक है, चांडालके गोत्रमें उत्पन्न हुई मेरा दुःखरूप शरीर कहां गया ॥ १३५ ॥ अहो मायाके विलासका बडा आश्चर्य मैंने देखा, जो कि, मेरे सहस्रों जन्मोंमें वारंवार भ्रान्ति होती है ॥ १३६ ॥ अहो, शिवजीकी पूजाका माहात्म्य

अनुभूतानिजन्मानिस्मृत्वास्मृत्वापुनःपुनः ॥ भीतात्रस्ताहृढाश्चर्यंदृष्ट्वास्वप्नमिवोत्थिता ॥ ३४ ॥ काहंकेमीमहासिद्धाःकोयंलोको मनोरमः ॥ गतमेवपुनःकष्टंचंडचांडालगोत्रजम् ॥ ३५ ॥ अहोसुमहदाश्चर्यंदृष्टंमायाविलासजम्॥ यन्मेभवसहस्रेषुभ्रांतंभ्रातं पुनःपुनः ॥ ३६ ॥ अहोईश्वरपूजायामाहात्म्यंविस्मयावहम् ॥ पत्रमात्रेणसंतुष्टोयोददातिनिजंपदम् ॥ ३७ ॥ इतितांजातनिर्वेदांस्मरंतींभगव त्पदम् ॥ दिव्यंविमानमारोप्यतेमहेश्वरकिंकराः ॥ ३८ ॥ आलोकयत्सुसर्वेषुलोकेशेषुसविस्मयम् ॥ आमंत्र्यतामथानिन्युःपरमे श्वरसान्निधिम् ॥ ३९ ॥ राजन्सुमहदाश्चर्यमाख्यातंगिरिजापतेः ॥ माहात्म्यंभक्तिलेशस्यसर्वाघौघविनाशनम् ॥ १४० ॥

बड़ा आश्चर्ययुक्त है, कि गोकर्णमें एक बिल्वपत्र चढ़ानेमात्रसे प्रसन्न होकर मुझको अपना लोक दिया ॥ १३७ ॥ इसप्रकार आश्चर्यको प्राप्त हो और शिवजीके चरणोंका स्मरण करतीहुई उस चांडालीको दिव्य विमानमें बैठाकर वे शिवजीके अनुचर ॥ १३८ ॥ आश्चर्यपूर्वक हम सबके देखतेदेखते बडे आदरपूर्वक शिवजीके निकट लेगये ॥ १३९ ॥ हे राजन्! यह आश्चर्ययुक्त शिवजीका आख्यान तुमसे कहा, शिवजीकी भक्तिका माहात्म्य

संपूर्ण पापोंको नष्ट करदेताहै ॥ १४० ॥ इस प्रकार गौतममुनिके वचनको सुनकर राजा बूझने लगे, कि हे भगवन् ! वह शिवजीका उत्तम लोक किस प्रकारका है. यदि मेरे ऊपर दया करते हो तो, उसका लक्षण मुझसे कहो ॥ १४१ ॥ गौतम ऋषि बोले कि, ब्रह्मलोक, विष्णुलोकसे शिवलोक उत्तम और बडा दुर्लभ है, जहां सदा आनन्द रहता है, वह शिवलोक है ॥१४२॥ जहाँ सब कोई नहीं जासकते, जहाँ ज्योतिका प्रकाश है, जहाँ अन्धकारका लेशमात्र नही, वह शिवलोक है ॥ १४३ ॥ सत, रज, तम, इन तीनों गुणोंको त्यागकर जहाँ योगीजन आते हैं, और फिर नही

॥ राजोवाच ॥ भगवन्परमेशस्यकीदृशोलोकउत्तमः ॥ तस्यमेलक्षणंब्रूहियद्यस्तिमयितेदया ॥ ४१ ॥ ॥ गौतमउवाच ॥ ॥ ब्रह्मा दिसुरनाथानांलोकेष्वपिसुदुर्लभः ॥ यआनंदःसदायत्रसलोकःपारमेश्वरः ॥ ४२ ॥ सर्वातिगमनंयत्रज्योतिर्यत्रप्रतिष्ठितम् ॥ क्वापिना स्ततमोयोगःसलोकःपारमेश्वरः ॥ ४३ ॥ गुणवृत्तिविनिस्तीर्यसंप्राप्तायत्रयोगिनः ॥ नपतेयुःपुनःसर्वेसलोकःपारमेश्वरः ॥ ४४ ॥ यत्रवासंनकुर्वंतिक्रोधलोभमदादयः ॥ यत्रावस्थानजन्माद्याःसलोकः पारमेश्वरः ॥ ४५ ॥ सर्वेषांनिगमानांचयदेकंक्षेत्रमुच्यते ॥ यस्मा न्नास्तिपरंवित्तंतत्पदंपारमेश्वरम् ॥ ४६ ॥ प्रत्याहारासनध्यानप्राणसंयमनादिभिः ॥ यत्रयोगपथैःप्राप्तुंयतंतेयोगिनःसदा ॥ ४७ ॥ यत्रदेवःसदानंदनिर्मलज्ञानरूपया ॥ अस्तिदेव्यासहक्रीडन्सलोकःपारमेश्वरः ॥ ४८ ॥

लौटते, वह शिवलोक है॥ १४४ ॥जहां क्रोध, लोभ और मद आदि नही टिकते,जहां जाकर फिर पुरुषका जन्म नहीं होता,अर्थात मुक्त होजाता है, वह शिवलोक है ॥ १४५॥सब शास्त्रोंमें इसी एक क्षेत्रको उत्तम कहा है, जिससे अधिक और कुछ परम वित्त नहीं है, वह शिवलोक है॥ १४६॥ तप, समाधि, ध्यान, प्राणायाम और योगसे सदा योगीजन जहाँ जानेकी इच्छा करते हैं ॥ १४७ ॥ जहाँ सदानन्द निर्मल ज्ञानरूपसे परमात्मा शंकर पार्वतीजीके साथ

क्रीडा करते हैं वह शिवलोक है ॥ १४८ ॥ सहस्रों जन्मोंसे सञ्चय कियेहुए पुण्योंके प्रतापसे जहां स्त्रीपुरुष क्रीडा करते हैं ॥ १४९ ॥ जहाँ निरन्तर प्रकाशमान तेजके प्रभावसे दिनरातका भेद विदित नहीं होता कि, रात्रि कब होती है क्योंकि वहां तो, हरसमय प्रकाशही बनारहता है ॥ ॥ १५० ॥ वह शिवजीका लोक कुयोगीको दुर्लभ है, जो शिवजीकी भक्तिमें रत रहते हैं, वे ही शिवलोकको जाते हैं ॥ १५१ ॥ जो शिवजीकी कथाको प्रसन्नतापूर्वक श्रवण और कीर्तन करते हैं, जो सब प्राणियोंपर दया करते हैं, शान्तिपूर्वक शिवजीकी भक्ति करते हैं, और जो संसार

जन्मानेकसहस्रेषुसंभृतैःपुण्यराशिभिः॥ आरूढाःपुरुषानार्यःक्रीडंतेयत्रसंगताः ॥४९॥ तेजोराशौसमालीनाद्दुर्विभाव्येमनोरमे ॥ अहोरात्रादिसंस्थानंनविदंतिकदाचन ॥ ५० ॥ सलोकःपरमेशस्यदुर्लभोहिकुयोगिनः ॥ एतद्भक्तिसुपूर्णायेतैरेवप्रतिपद्यते ॥५१॥ येयत्कथाश्रवणकीर्तनजातहर्षायेभूतसर्वसुहृदःप्रशमैकनिष्ठाः ॥ संसारचक्रमतिवाह्यनिरस्तमोहास्तेशांकरंपदमवाप्यसुखंरमन्ते ॥५२॥ तथात्वमपिराजेंद्रगोकर्णंगिरिशालयम् ॥ गत्वाप्रशमिताघौघःकृतकृत्यत्वमाप्नुहि ॥५३॥ तत्रसर्वेषुकालेषुस्नात्वाभ्यर्च्यमहाबलम् ॥ कृत्वाशिवचतुर्दश्यामुपवासंसमाहितः ॥ ५४ ॥ कृत्वाजागरणंरात्रौबिल्वैरभ्यर्च्यशंकरम् ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तःशिवलोकमवाप्स्यासि ॥५५॥

चक्रको छोडकर मोह नहीं करते, वे ही शिवलोकमें प्राप्त होकर सुखपूर्वक विहार करते है ॥ १५२ ॥ हे राजेंद्र ! इसलिये तुम भी शिवस्थान गोकर्णक्षेत्रमें जाओ और ब्रह्महत्यारूप पापसमूहको नष्ट करके कृतकृत्यत्वको प्राप्त होओ ॥ १५३ ॥ वहाँ नित्यप्रति स्नान करके महाबलनामक शिवजीका पूजन और शिवचतुर्दशीको नियमपूर्वक उपवास ॥ १५४ ॥ रात्रिमें जागरण तथा बिल्वपत्रोंसे शंकरका पूजन करके सम्पूर्ण पापोंसे

छूटकर.शिवलोकमें गमन करोगे ॥ १५५ ॥ हे राजन् ! यह सुन्दर उपदेश मैंने तुमको किया, तुम्हारी स्वस्ति हो, अब हम राजा जनककी पुरी मिथिलाको जाते हैं ॥१५६॥इस प्रकार प्रीतिपूर्वक राजाको समझा बुझाकर गौतममुनि मिथिलापुरीको चलेगये और वह राजा प्रसन्नतापूर्वक गोकर्ण क्षेत्रको गया ॥ १५७ ॥ वहाँ स्नान करके महाबलनामक महादेवका दर्शन और पूजन करके राजाको सम्पूर्ण पापसमूहोंसे मुक्ततापूर्वक शिवजीके परमपद (शिवलोक) की प्राप्ति हुई ॥ १५८ ॥ जो इस शिवजीकी मनोहर कथाको भक्तिपूर्वक नित्य सुनता वा सुनाता है, वह शिवजीके परम

एषतेविमलोराजन्नुपदेशोमयाकृतः ॥ स्वस्तितेस्तुगमिष्यामिमिथिलाधिपतेःपुरीम् ॥ ५६ ॥ इत्यामंत्र्यमुनिः प्रीत्यागौतमोमिथिलांययौ ॥ सोपिहृष्टमनाराजागोकर्णप्रत्यपद्यत ॥ ५७॥ तत्रदृष्ट्वामहादेवंस्नात्वाभ्यर्च्यमहाबलम् ॥ निःशेषजातपापौघोलेभेशंभोः परंपदम् ॥ ५८ ॥ यइमांशृणुयान्नित्यं कथांशैवींमनोहराम् ॥ श्रावयेद्वाजनोभक्त्यासयातिपरमांगतिम् ॥ १५९ ॥ इतिकथितमशेषंश्रेयसामादिबीजंभवशतदुरितघ्नंध्वस्तमोहांधकारम् ॥ चरितममरगेयंमन्मथारेरुदारंसततमपिनिषेव्यंस्वस्तिमद्भिश्चलोकैः ॥ १६० ॥ इति श्री स्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेशिवचतुर्दशीमाहात्म्यंनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

पदको प्राप्त होता है ॥ १५९ ॥ हे मुनीश्वरो ! सम्पूर्ण कल्याणोंका बीजरूप, सैकडों पापोंका दूरकरनेवाला, मोहरूप अन्धकारको नष्ट करनेवाला देवताओंके द्वारा गान कियाहुआ, यह शिवजीका चरित्र तुमसे वर्णन किया, कल्याणकी इच्छावाले पुरुषोंको इसका निरन्तर सेवन करना चाहिये ॥ १६० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पंडितदातारापसूनुपंडितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायांशिवचतुर्दशीमाहात्म्यं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः ॥ सूतजी बोले कि, हे ऋषियों ! और भी परमअद्भुतरूप शिवजीका माहात्म्य तुमसे वर्णन करताहूँ, कि, जो सुननेवालोंके सम्पूर्ण पाप नष्टकरके संसारकी फांसीसे मुक्त करदेता है ॥१॥ दुष्कर्मरूप समुद्रमें पापोंसे दग्ध और डूबते हुए मनुष्योंके पार करनेको एक शिवजीकी पूजा ही नौकारूप निरूपण करी है ॥२॥ इस संसारमें बुद्धिमान् पुरुषको सदा शिवजीकी पूजा करनी चाहिये, पूजा करनेमें असमर्थ हो तो दूसरेके द्वाराकी हुई पूजाको नम्रतापूर्वक देखे ॥ ३ ॥ जो कोई अश्रद्धासेभी मुक्तिकी दाता शिवजीकी पूजा करता है अथवा देखता है, वह भी कुछ समयके

॥ सूतउवाच ॥ ॥ भूयोपिशिवमाहात्म्यंवक्ष्यामिपरमाद्भुतम् ॥ शृण्वतांसर्वपापघ्नंभवपाशविमोचनम् ॥ १ ॥ दुस्तरेदुरितांभोधौ मज्जतांविषयात्मनाम् ॥ शिवपूजांविनाकाश्चित्प्लवोनास्तिनिरूपितः ॥ २ ॥ शिवपूजांसदाकुर्याद्बुद्धिमानिहमानवः ॥ अशक्तश्चेत्कृतांपूजांपश्येद्भक्तिविनम्रधीः ॥ ३ ॥ अश्रद्धयापियःकुर्याच्छिवपूजांविमुक्तिदाम् ॥ पश्येद्वासोपिकालेनप्रयातिपरमंपदम् ॥ ४ ॥ आसीत्किरातदेशेषुनाम्नाराजाविमर्दनः ॥ शूरःपरमदुर्द्धर्षोजितशत्रुःप्रतापवान् ॥ ५ ॥ सर्वदामृगयासक्तःकृपणोनिर्घृणोबली ॥ सर्वमांसाशनःक्रूरःसर्ववर्णांगनावृतः ॥ ६ ॥ तथापिकुरुतेशंभोः पूजांनित्यमतंद्रितः ॥ चतुर्दश्यांविशेषेणपक्षयोःशुक्लकृष्णयोः ॥ ७ ॥

उपरान्त शिवजीके परमपदको प्राप्त होजाता है ॥ ४ ॥ इस विषयमें एक पुरातन इतिहास वर्णन करते हैं कि, किरातदेशमें शूर, परमदुर्धर्ष, शत्रुओंको जीतनेवाला, प्रतापवान, विमर्दननामक एक राजा था ॥ ५ ॥ निरन्तर मृगया (शिकार) में आसक्त, क्रूर, कृपण, घृणारहित, बली, सब जीवोंका मांस भक्षण करनेवाला, क्रूर और सब वर्णोंकी स्त्रियोंमें गमन करनेवाला था ॥ ६ ॥ तथापि महीनेकी दोनों चतुर्दशियोंको आलस्यरहित

होकर शंकरका पूजन कियाकरता था ॥ ७ ॥ आरै महाविभवयुक्त पूजा करके प्रसन्न होता था तथा प्रसन्नतापूर्वक शिवजीके सन्मुख नृत्य, स्तुति और गान करता था ॥ ८ ॥ इसप्रकार स्थित, सर्वभक्षी, और दुराचारी अपने पतिको देखकर रानी दुःखी होती थी ॥ ९ ॥ एक समय शील गुणसंपन्न कुमुद्वती नामवाली वह रानी एकान्तमें पतिके मिलनेपर उस (राजा) से बूझनेलगी ॥ १० ॥ कि, हे राजन् ! तुम्हारा यह चारित महा आश्चर्यकारक है, कहाँ तो यह महादुराचार और कहाँ यह शंकरमें तुम्हारी भक्ति ॥ ११ ॥ तुम सदा सर्वप्रकारके मांस भक्षण करते हो, सर्व

महाविभवसंपन्नांपूजांकृत्वासमोदते ॥ हर्षेणमहताविप्रोनृत्यातिस्तौतिगायाति ॥ ८ ॥ तस्यैवंवर्तमानस्यनृपतेःसर्वभक्षिणः ॥ दुराचारस्यमहिषीचेष्टितेनान्वतप्यत ॥ ९ ॥ सावैकुमुद्वतीनामराज्ञीशीलगुणान्विता ॥ एकदापतिमासाद्यरहस्येतदपृच्छत ॥ १० ॥ एतत्तेचरितंराजन्महदाश्चर्यकारणम् ॥ क्वतेमहान्दुराचारःक्वभक्तिःपरमेश्वरे ॥ ११ ॥ सर्वदासर्वभक्षस्त्वंसर्वस्त्रीजनलालसः ॥ सर्वहिंसापरःक्रूरः कथंभक्तिस्तवेश्वरे ॥ १२ ॥ इतिपृष्टःसभूपालोविमृश्यसुचिरंततः ॥ त्रिकालज्ञःप्रहस्यैनांप्रोवाचसुकुतूहलः ॥ १३ ॥ राजोवाच ॥ अहंपूर्वभवेकश्चित्सारमेयोवरानने ॥ पंपानगरमाश्रित्यपर्यटामिसमंततः ॥ १४ ॥

स्त्रियोंमें तुम्हारी लालसा रहती है, सब जीवोंकी हिंसा करते हो, क्रूर हो, फिर तुम्हारी शिवजीमें भक्ति किसप्रकार हुई ॥ १२ ॥ सो कृपाकरके मुझे सुनाइये, जिससे मेरा भ्रम जाय, इसप्रकार रानीके बूझनेपर त्रिकाल (भूत, भविष्य, वर्त्तमान) का जाननेवाला वह राजा कुछ समयतक विचार कर लीलापूर्वक हँसकर बोला ॥ १३ ॥ राजा बोला हे वरानने ! पूर्वजन्ममें मै कुत्ता था और पम्पानगरमें रहकर चारों ओर भ्रमण करता था,

॥ १४ ॥ इसप्रकार कुछ समय बीतनेपर उसी सुंदरनगरमें किसी समयमें मनोहर एक शिवमंदिरमें आया ॥ १५ ॥ महातिथि शिवचतुर्दशीको होतीहुई शिव
पूजाको उत्सुक होकर दूरसे मंदिरके द्वारदेशमें स्थितहुआ देखता रहा ॥ १६ ॥ पूजा करतेहुए पुरुषोंने जब मुझे खड़ा देखा तब उन्होंने क्रोधसे दंड हाथमें लेकर
मुझे भगादिया अपने प्राणोंकी रक्षाके निमित्त मैं उस स्थानसे भागकर॥ १७ ॥उस सुन्दर शिवमंदिरकी प्रदक्षिणा करके बलि पिंडादिके लोभसे फिर उसी द्वार
पर आगया ॥ १८ ॥ जब मैं द्वारपर खड़ा होऊं तभी वे भगावें. इसप्रकार बारंबार प्रदक्षिणा करके मैं फिर भी उसी द्वारपर बैठगया, द्वारपर

एवंकालेपुगच्छत्सुतत्रैवनगरोत्तमे ॥ कदाचिदागतःसोहंमनोज्ञंशिवमंदिरम् ॥ १५ ॥ पूजायांवर्त्तमानायांचतुर्दश्यांमहातिथौ ॥
अपश्यमुत्सुकोदूराद्बहिर्द्वारंसमाश्रितः ॥ १६ ॥ अथाहंपरमक्रुद्धैर्दंडहस्तैःप्रधावितः ॥ तस्माद्देशादपक्रांतःप्राणरक्षापरायणः ॥ १७ ॥
ततःप्रदक्षिणीकृत्यमनोज्ञंशिवमंदिरम् ॥ बलिपिंडादिलोभेनपुनर्द्वारमुपागतः ॥ १८ ॥ एवं पुनःपुनस्तत्रकृत्वाकृत्वाप्रदक्षिणाम् ॥
द्वारदेशेसमासीनंनिजघ्नुर्निशितैःशरैः ॥ १९ ॥ सविद्धगात्रःसहसाशिवद्वारिगताशुभः ॥ जातोस्म्यहंकुलेराज्ञांप्रभावाच्छिवसन्निधेः ॥
॥ २० ॥ दृष्ट्वाचतुर्दशीपूजांदीपमालाविलोकिताः ॥ तेनपुण्येनमहतात्रिकालज्ञोस्मिभामिनि ॥ २१ ॥ प्राग्जन्मवासनाभिश्चसर्वभ
क्षोस्मिनिर्घृणः ॥ विदुषामपिदुर्लंघ्याप्रकृतिर्वासनामयी ॥ २२ ॥

बैठेहुए मुझको उन्होंने तीक्ष्ण बाणोंसे वध किया ॥ १९ ॥ और मैं पंचत्वको प्राप्त होगया, शिवमंदिरके निकट मृत्यु होनेके प्रभावसे मेरा राजकुलमें
जन्म हुआ ॥ २० ॥ शिवचतुर्दशीकी पूजा और दीपमालाका जो मैंने दर्शन किया, हे भामिनि ! उस महापुण्यके प्रभावसे मैं त्रिकालज्ञ हुआ ॥
॥ २१ ॥ और पूर्वजन्मकी वासनासे सर्वभक्षी और घृणारहित हुआ, पूर्वजन्मकी वासनाको पंडित भी दूर नहीं करसकते ॥ २२ ॥

इसीलिये मैं शिवचतुर्दशीको जगत्के स्वामी शंकरका पूजन करताहूँ, हे भद्रे ! तू भी श्रद्धापूर्वक शंकरका पूजन, भजन कर॥ २३॥ रानी बोली कि, हे राजन् ! आप त्रिकालदर्शी हो, इसलिये मेरे पूर्वजन्मकी कथा ठीक २ वर्णन कीजिये, राजा बोला, हे वरानने ! मैं तेरे पूर्वजन्मकी कथा कहता हूँ, कि, तू पूर्वजन्ममें आकाशमें फिरनेवाली कोई एक कबूतरी थी ॥ २४ ॥ आकाशमें फिरते २ तुझको कही मांसका पिंड मिला, मांस ग्रहणकरती हुई तुझको देख एक गृद्ध मांस लेनेकी इच्छासे ॥ २५ ॥ भीषणरूप धारणकरके तेरे ऊपर दौडा, तब हे वरानने ! तू उसको देखकर डरी और

अतोहमर्चयामीशंचतुर्दश्यांजगद्गुरुम् ॥ त्वमपिश्रद्धयाभद्रेभजदेवंपिनाकिनम् ॥ २३ ॥ ॥ राज्ञ्युवाच ॥ मत्पूर्वजन्मचरितंवक्तुमर्हसितत्त्वतः ॥ ॥ राजोवाच ॥ त्वंतुपूर्वभवेकाचित्कपोतीव्योमचारिणी ॥ २४ ॥ क्वापिलब्धवतीकिंचिन्मांसपिंडंयदृच्छया ॥ त्वद्गृहीतमथालोक्यगृध्रःकोप्यामिषंबली ॥ २५ ॥ निरामिषःस्वयंवेगादभिदुद्रावभीषणः ॥ ततस्तंवीक्ष्यवित्रस्ताविद्रुतासिवरानने ॥ ॥ २६ ॥ तेनानुयाताघोरेणमांसपिंडजिघृक्षया ॥ दिष्ट्याश्रीगिरिमासाद्यश्रांतातत्रशिवालयम् ॥ २७ ॥ प्रदक्षिणंपरिक्रम्यध्वजाग्रेसमुपस्थिता ॥ अथानुसृत्यसहसातीक्ष्णतुंडोविहंगमः ॥ २८ ॥ त्वांनिहत्यनिपात्याधोमांसमादायजग्मिवान् ॥ प्रदक्षिणप्रक्रमणाद्देवदेवस्यशूलिनः ॥ २९ ॥ तस्याग्रेमरणाच्चैवजातासीहनृपांगना ॥ ॥ राज्ञ्युवाच ॥ ॥ श्रुतंपूर्वमशेषेणप्राग्जन्मचरितंमया ॥ ३० ॥

दौडी ॥ २६ ॥ घोररूपसे, मांस लेनेकी इच्छासे वह तेरे पीछे भागता ही गया, भाग्यसे तू श्रीगिरिपर्वतपर थककर एक शिवालयकी ॥ २७ ॥ प्रदक्षिणा करके ध्वजाके अग्रभागपर बैठगई, किन्तु तीक्ष्णचोंचवाला वह गृद्ध अकस्मात् पीछेसे आकर ॥ २८ ॥ तुझको मार और नीचे गिराकर मांस लेकर चलदिया, देवदेव त्रिशूलधारी महादेवजीकी प्रदक्षिणाके प्रभाव ॥ २९ ॥ और उनके आगे मरनेसे तू इस जन्ममें राजकन्या हुई,

रानी बोली, मैने अपने पूर्वजन्मका सम्पूर्ण चरित सुना ॥ ३० ॥ मुझे बड़ा आश्चर्य होता है और शिवभक्ति भी मेरे हृदयमें उत्पन्न होती है, हे
महामते ! तुम त्रिकालज्ञ हो इसकारण कुछ और सुनाचाहती हूँ ॥ ३१ ॥ कि, इस शरीरको त्यागकर फिर हम तुम किस गतिको प्राप्त होंगे ?
राजा बोला, दूसरे जन्ममें मैं सिंधुदेशका राजा होऊंगा ॥ ३२ ॥ और तू सृंजयेश राजाकी कन्या होकर मुझको प्राप्त होगी, तीसरे जन्ममें मैं
सौराष्ट्रदेशका राजा होऊँगा ॥ ३३ ॥ कलिंगराजाकी कन्या होकर तू मेरी पत्नी बनैगी, चौथे जन्ममें गन्धारदेशका राजा मैं बनूँगा ॥ ३४ ॥

जातंचमहदाश्चर्यंभक्तिश्चममचेतासि ॥ अथान्यच्छ्रोतुमिच्छामित्रिकालज्ञमहामते ॥ ३१ ॥ इदंशरीरमुत्सृज्ययास्यावः कांगतिं
पुनः ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ अतोभवेजनिष्येहंद्वितीयेसैंधवोनृपः ॥३२॥ सृंजयेशसुतात्वंहिमामेवप्रतिपत्स्यसे ॥ तृतीयेतुभवेराजासौ
राष्ट्रेभवितास्म्यहम् ॥३३॥ कलिंगराजतनयात्वंमेपत्नीभविष्यसि ॥ चतुर्थेतुभविष्यामिभवेगांधारभूमिपः ॥ ३४ ॥ मागधीराजतनया
तत्रत्वंममगेहिनी ॥ पंचमेऽवंतिनाथोहंभविष्यामियुगांतरे॥३५॥ दाशार्हराजतनयात्वमेवममवल्लभा॥ अस्माज्जन्मनिषष्ठेहमानर्तेभविता
नृपः ॥ ३६ ॥ ययातिवंशजाकन्याभूत्वामामेवयास्यसि ॥ पांड्यराजकुमारोहंसप्तमेभविताभवे ॥ ३७ ॥ तत्रमत्सदृशोनान्योरूपौदा
र्यगुणादिभिः ॥ सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञोबलवान्दृढविक्रमः ॥ ३८ ॥

तू मगधदेशके राजाकी पुत्री होकर मेरी पत्नी बनैगी, पांचवें जन्ममें अवंति (उज्जैन) का अधिपति मैं होऊंगा ॥ ३५ ॥ तू दाशार्हराजतनया होकर
मेरी प्यारी पत्नी होगी, छठे जन्ममें आनर्त्तदेशका राजा मैं होऊँगा ॥ ३६ ॥ तू ययातिदेशके राजाकी पुत्री होकर मुझे वरैगी, सातवें जन्ममें मैं
पांड्यराजाका पुत्र होऊँगा ॥ ३७ ॥ रूप और उदारता आदिमें मेरे समान कोई न होगा, सर्वशास्त्रके तत्त्वको जाननेवाला, बलवान्,

दृढपराक्रमी॥ ३८॥ सर्वलक्षणसम्पन्न, सबका प्यारा, पद्ममित्रकी समान कान्तियुक्त और पद्मवर्ण इस नामसे विख्यात होऊँगा ॥३९॥ तू भी विदर्भ देशके राजाकी तनया, अनुपमेय (उपमारहित) रूप और अवयवोंसे शोभायमान ॥ ४० ॥ सम्पूर्ण राजकुमारोंके नेत्रोंको आनन्द देनेवाली, वसुमतीनामसे विख्यात होगी, वह तू अपने स्वयंवरमें सब राजकुमारोंको त्यागकर ॥ ४१ ॥ नलको दमयन्तीके समान मुझे वरैगी, वह मैं सब राजाओंको जीतकर और सुन्दरमुखवाली तुझको लेकर ॥ ४२ ॥ अपने राज्यमें अनेकवर्षोंपर्यंत सम्पूर्ण भोगोंको भोगूँगा, अश्वमेध आदि यज्ञोंसे

सर्वलक्षणसंपन्नःसर्वलोकमनोरमः ॥ पद्मवर्णइतिख्यातःपद्ममित्रसमद्युतिः ॥ ३९ ॥ भवितात्वंचवैदर्भीरूपेणाप्रतिमाभुवि ॥ नाम्नावसुमतीख्यातारूपावयवशोभिनी ॥ ४० ॥ सर्वराजकुमाराणांमनोनयननंदिनी ॥ सात्वंस्वयंवरेसर्वान्विहायनृपनंदनान् ॥ ॥ ४१ ॥ वरंप्राप्स्यसिमामेवदमयंतीवनैषधम् ॥ सोहंजित्वानृपान्सर्वान्प्राप्यत्वांवरवर्णिनीम् ॥ ४२ ॥ स्वराष्ट्रस्थोखिलान्भोगान्भोक्ष्येवर्षगणान्बहून् ॥ इष्ट्वाचविविधैर्यज्ञैर्वाजिमेधादिभिःशुभैः ॥ ४३ ॥ संतर्प्यपितृदेवर्षीन्दानैश्चद्विजसत्तमान् ॥ संपूज्यदेवदेवेशंशंकरंलोकशंकरम् ॥ ४४ ॥ पुत्रेराज्यधुरंन्यस्यगंतास्मितपसेवनम्॥ तत्रागस्त्यान्मुनिवराद्ब्रह्मज्ञानमवाप्यच ॥४५॥ त्वयासहगमिष्यामिशिवस्यपरमंपदम् ॥ चतुर्दश्यांचतुर्दश्यामेवंसंपूज्यशंकरम् ॥ ४६ ॥

यज्ञ करके ॥ ४३ ॥ और पितर, देव और ऋषियोंको तृप्त करके तथा दानसे ब्राह्मणोंको सन्तुष्ट और मनुष्योंका कल्याण करनेवाले शंकरका पूजन करके ॥ ४४ ॥ पुत्रको राज्य देकर वनमें तपस्या करनेके निमित्त जाऊंगा, वहाँ मुनिश्रेष्ठ अगस्त्यजीसे ब्रह्मज्ञान प्राप्तकरके ॥ ४५ ॥ हे वरानने ! तेरे साथ शिवलोकको जाऊंगा, इसप्रकार प्रत्येक चतुर्दशीमें शंकरका पूजनकर सातजन्मतक राज्यका सुख भोगकर हे वरानने ! अन्तमें

कैलासवास मिलैगा, शिवजीकी पूजा और दर्शनका यह पुण्य मुझको प्राप्त होगा ॥४६॥४७॥ कहाँ तो दुष्टात्मा श्वानयोनि और कहाँ यह सद्गति
हे वरानने ! शिवपूजाका यही माहात्म्य है, सूतजी फिर ऋषियोंसे कहने लगे कि; इसप्रकार राजाके वचन सुनकर शुभलक्षणयुक्त वह रानी ॥४८॥
बडा आश्चर्य करनेलगी और प्रसन्नतापूर्वक उसका पूजन किया, वह राजा भी रानीसमेत यथेप्सित भोगोंको भोगकर ॥ ४९ ॥ सातजन्मके
उपरान्त शम्भुके परमपद अर्थात् कैलासको गया, इस शिवपूजाके परम अद्भुत माहात्म्यको जो कोई श्रवण वा कीर्तन करता है वह भी परम

सप्तजन्मसुराजत्वंभविष्यतिवरानने॥ इत्येतत्सुकृतंलब्धंपूजादर्शनमात्रतः ४७ ॥ क्वसारमेयोदुष्टात्माक्वेदृशीवतसद्गतिः ॥ ॥ सूत
उवाच ॥ ॥ इत्युक्त्वानिजनाथेनसाराज्ञीशुभलक्षणा ॥ ४८ ॥ परंविस्मयमापन्नापूजयामासतंमुदा॥ सोपिराजातयासार्द्धंभुक्त्वाभो
गान्यथेप्सितान् ॥४९॥ जगामसप्तजन्मांतेशंभोस्तत्परमंपदम् ॥ यएतच्छिवपूजायामाहात्म्यंपरमाद्भुतम् ॥ शृणुयात्कीर्तयेद्वापिसग
च्छेत्परमंपदम् ॥ ५० ॥ ॥ इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेचतुर्दशीमाहात्म्यंनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ ॥ सूत उवाच॥ ॥
शिवोगुरुःशिवोदेवःशिवोबंधुःशरीरिणाम् ॥ शिवआत्माशिवोजीवःशिवादन्यन्नकिञ्चन ॥ १ ॥ शिवमुद्दिश्ययत्किंचिद्दत्तंजप्तंहुतंकृ
तम् ॥ तदनंतफलंप्रोक्तंसर्वागमविनिश्चितम् ॥ २ ॥

पदको प्राप्त होता ॥ ५० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखण्डे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायांचतुर्दशीमाहात्म्यं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥
अथ पंचमोऽध्यायः॥ सूतजी बोले कि, हे मुनिश्रेष्ठो ! शिव गुरु हैं, शिव देव हैं, शिवही मनुष्यों वा शरीरधारियोंके बन्धु हैं, शिव आत्मा हैं, शिव जीव
है, शिवके अतिरिक्त कुछ नहीं है ॥ १ ॥ शिवजीके उद्देशसे जो कुछ दान, जप, हवन वा और जो कुछ कियाजाता है, उसका अनन्त फल होता

है ॥ ३ ॥ सब धर्म और सब शास्त्रोंके निश्चयको त्यागकर जो केवल शंकरकी ही पूजा और भक्तिको करता है, वह सब बन्धनोंसे छूट जाताहै ॥ ४ ॥ जितनी प्रीति आत्मा, पुत्र और स्त्रीमें है, उतनी प्रीति यदि शंकरकी पूजामें हो तो, वह अवश्य रक्षा करें, इसमें कुछ आश्चर्य नहीं है ॥ ५ ॥ इसलिये कोई २ महात्मा सब विषयोंको त्याग देते है, और कोई तो शिवपूजाके निमित्त त्यागनेके अयोग्य शरीरको भी त्याग देते हैं ॥ ६ ॥ वही

भक्त्यानिवेदितंशंभोः पत्रंपुष्पंफलंजलम् ॥ अल्पादल्पतरंवापितदानंत्यायकल्पते ॥ ३ ॥ विहायसकलान्धर्मान्सकलागमनिश्चितान् ॥ शिवमेकंभजेद्यस्तुमुच्यतेसर्वबंधनात् ॥ ४ ॥ याप्रीतिरात्मनःपुत्रेयाकलत्रेधनेपिसा ॥ कृताचेच्छिवपूजायांत्रायतीतिकिमद्भुतम् ॥ ५ ॥ तस्मात्केचिन्महात्मानःसकलान्विषयासवान् ॥ त्यजंतिशिवपूजार्थेस्वदेहमपिदुस्त्यजम् ॥ ६ ॥ साजिह्वायाशिवंस्तौतितन्मनोध्यायतेशिवम् ॥ तौकर्णौतत्कथालोलौतौहस्तौतस्यपूजकौ ॥ ७ ॥ तेनेत्रेपश्यतःपूजांतच्छिरःप्रणतंशिवे ॥ तौपादौयौशिवक्षेत्रंभक्त्यापर्यटिनौसदा ॥ ८ ॥ यस्येन्द्रियाणिसर्वाणिवर्त्ततेशिवकर्मसु ॥ सनिस्तरतिसंसारंभुक्तिमुक्तिंचविन्दति ॥ ९ ॥

जिह्वा है,जो शिवजीकी स्तुति करे, वही मन है जो शंकरका ध्यान करे,वे ही कान हैं जो शिवकथा सुननेके लोभी हैं,और वे ही हाथ हैं जो शिवके पूजक हैं ॥ ७ ॥ वे ही नेत्र है, जो शिवपूजाका दर्शन करते है, वही शिर है, जो शिवको नवै, वे ही चरण हैं, जो भक्तिपूर्वक सदा शिवक्षेत्रोंमें पर्यटन करते हैं ॥ ८ ॥ जिसकी सब इन्द्रियें शिवकर्ममें लगी रहती हैं, वह संसारसागरसे पार होकर भुक्ति और मुक्तिको प्राप्त होताहै ॥ ९ ॥

शिवकी भक्ति करनेवाला चाडाल, पुल्कस (नीच) स्त्री वा नपुसक भी संसारसे तत्काल छूटजाता है ॥१०॥ कुल, आचार, शील और गुणोंसे क्या है, शिवभक्ति करनेवाला पुरुष सब देह धारियोंको नमस्कार करनेयोग्य है ॥११॥ इसप्रकार कहकर फिर सूतजी बोले कि, शिवभक्ति बढ़ानेवाली एक कथा वर्णन करते हैं, हे ऋषियो ! तुम मन लगाकर सुनो, उज्जयिनी नगरीमें दूसरे इन्द्रके तुल्य मनुष्यरूपधारी चन्द्रसेननामक एक राजा था ॥ १२ ॥

शिवभक्तियुतोमर्त्यश्चांडालःपुल्कसोपिच ॥ नारीनरोवाषंढोवासद्योमुच्येतसंसृतेः ॥ १० ॥ किंकुलेनकिमाचारैःकिंशीलेनगुणेनवा ॥ भक्तिलेशयुतः शंभोः स वंद्यः सर्वदेहिनाम् ॥ ११ ॥ उज्जयिन्यामभूद्राजाचन्द्रसेनसमाह्वयः ॥ जातोमानवरूपेणद्वितीयइववासवः ॥ ॥ १२ ॥ तस्मिन्पुरेमहाकालंवसंतंपरमेश्वरम् ॥ संपूजयत्यसौभक्त्याचन्द्रसेनोनृपोत्तमः ॥ १३ ॥ तस्याभवत्सखाराज्ञःशिवपारिषदाग्रणीः ॥ मणिभद्रोजिताभद्रःसर्वलोकनमस्कृतः ॥ १४ ॥ तस्यैकदामहीभर्त्तुःप्रसन्नःशंकरानुगः ॥ चिन्तामणिंददौदिव्यंमणिभद्रोमहामतिः ॥ १५ ॥ समणिःकौस्तुभइवद्योतमानोर्कसन्निभः ॥ दृष्टःश्रुतोवाध्यातोवानृणांयच्छतिमंगलम् ॥ १६ ॥ तस्यकांतिलवस्पृष्टंकांस्यंताम्रायसंत्रपु ॥ पाषाणादिकमन्यद्वासद्योभवतिकांचनम् ॥ १७ ॥

वह राजा उसी पुरीमें स्थित महाकालनामक शंकरका पूजन कियाकरता था ॥ १३ ॥ शिवजीके पार्षदोंमें प्रधान, सबलोकोंसे पूजित, मणिभद्रनामक यक्ष उस राजाका मित्र था ॥ १४ ॥ एक समय मणिभद्रने प्रसन्नतापूर्वक राजाको एक दिव्य चिन्तामणि दी ॥ १५ ॥ कौस्तुभकी समान वह मणि सूर्य्यकी तुल्य प्रकाशमान होरही थी, उसके देखने सुनने वा ध्यान करनेसे मनुष्योंको कल्याणकी प्राप्ति होती है ॥ १६ ॥ उसकी कान्तिमात्रके स्पर्शसे

कांसी, ताँबा, लोहा, शीशा और पाषाण आदि तथा अन्य धातु तत्काल सुवर्ण होजाती है ॥ १७ ॥ वह राजा चिन्तामणिको कंठमें धारणकर राज्यासनपर गया, देवताओंमें सूर्य्यके समान राजाकी शोभा हुई ॥ १८ ॥ राजाके कण्ठमें चिन्तामणि है. यह सुनकर सब राजा क्रोधके वेगसे क्षुद्र हृदयवाले हो गये ॥१९॥ किन्ही राजाओंने तो स्नेहसे मणि मांगी और कितनोंने धृष्टतासे अर्थात् बलपूर्वक लेनी चाही, किन्तु वे मत्सरी राजा यह नही जानते थे कि, यह चिन्तामणि प्रारब्धसे मिलती है ॥ २० ॥ पराक्रमसे नही, सब राजाओंकी याञ्चाको जब उसने व्यर्थ करादिया, तब सब

सतंचिन्तामणिंकंठेबिभ्रद्राजासनंगतः ॥ रराजराजादेवानांमध्येभानुरिवस्वयम् ॥ १८ ॥ सदाचिन्तामणिग्रीवंतंश्रुत्वाराजसत्तमम् ॥ प्रबुद्धतर्षाराजानःसर्वेक्षुब्धहृदोभवन् ॥ १९ ॥ स्नेहात्केचिद्याचंतधाष्टर्यात्केचनदुर्मदाः ॥ दैवलब्धमजानंतोमणिंमत्सरिणोनृपाः ॥ ॥२०॥ सर्वेषांभूभृतांयाञ्चायदाव्यर्थीकृतामुना ॥ राजानःसर्वदेशानांसंरंभंचक्रिरेतदा ॥२१॥ सौराष्ट्राःकैकयाःशाल्वाःकलिंगशकमद्रकाः ॥ पांचालावंतिसौवीरामगधामत्स्यसृंजयाः॥२२॥एतेचान्येचराजानःसहाश्वरथकुंजराः॥ चंद्रसेनंमृधेजेतुमुद्यमंचक्रुरोजसा॥२३॥ तेतुसर्वेसुसंरब्धाःकंपयंतोवसुंधराम् ॥ उज्जयिन्याश्चतुर्द्वाररुरुधुर्बहुसैनिकाः ॥ २४ ॥

देशोंके राजाओंने उसके ऊपर वेगसे चढ़ाई करदी ॥ २१ ॥ इसप्रकार अनेक सौराष्ट्र, केकय, शाल्व, कलिंग, शक, मद्रक, पांचाल, अवंति, सौवीर, मागध, मत्स्य और सृञ्जय आदि देशोंके ॥ २२ ॥ तथा अन्य देशोंके राजा अश्व, कुंजर, रथ, प्यादोंकी सेनाको लेकर चन्द्रसेन राजाको युद्धमें बल पूर्वक जीतनेके निमित्त उद्योग करने लगे ॥ २३ ॥ वे सब सैनिक मिलेहुए, भूमिको कम्पायमान करतेहुए उज्जयिनी नगरीमें पहुंचे और चारों ओरसे

उसके द्वार रोक लिये ॥ २४ ॥ उद्धत राजाओंसे रुकीहुई अपनी पुरीको देखकर चन्द्रसेन राजा उन्हीं महाकाल नामक शंकरकी शरण हुआ
॥ २५ ॥ इसी अवसरमें उसी पुरमें रहनेवाली एक गोपी दूध, दही बेचती हुई अपने एक बालकको साथ लिये पतिहीन वहां आई कि, जहां राजा
महाकाल नामक महादेवकी आराधना कररहाथा ॥ २६ ॥ वहां अपने पांच वर्षके बालकको अपने साथही रखतीथी, क्योंकि उसके पति तो थाही
नहीं, राजाके द्वारा की हुई शंकरकी महापूजाको उसने देखा ॥ २७ ॥ शिवपूजाके आश्चर्यरूप महोदयको देख और प्रणाम करके अपने शिविरमें पहुँ

संरुध्यमानांस्वपुरींदृष्ट्वाराजभिरुद्धतैः ॥ चंद्रसेनोमहाकालंतमेवशरणंययौ ॥ २५ ॥ एतस्मिन्नंतरेगोपीकाचित्तत्पुरवासिनी ॥
एकपुत्राभर्तृहीनातत्रैवासीच्चिरंतना ॥ २६ ॥ सापंचहायनंबालंवहंतीगतभर्तृका ॥ कृतांराज्ञामहापूजांददर्शगिरिजापतेः ॥ २७ ॥
साहृष्ट्वासर्वमाश्चर्यंशिवपूजामहोदयम् ॥ प्रणिपत्यस्वशिबिरंपुनरेवाभ्यपद्यत ॥ २८ ॥ एतत्सर्वमशेषेणसदृष्ट्वाबल्लवीसुतः ॥ कुतूहले
नविदधेशिवपूजांविरक्तिदाम् ॥ २९ ॥ आनीयहृद्यंपाषाणंशून्येतुशिबिरोत्तमे ॥ नातिदूरेस्वशिबिराच्छिवलिंगमकल्पयत् ॥ ३० ॥
यानिकानिचपुष्पाणिहस्तलभ्यानिचात्मनः ॥ आनीयस्नाप्यतल्लिंगंपूजयामासभक्तितः ॥ ३१ ॥ गंधालंकारवासांसिधूपदीपाक्षता
दिकम् ॥ विधायकृत्रिमैर्दिव्यैर्नैवेद्यंचाप्यकल्पयत् ॥ ३२ ॥

ची ॥ २८ ॥ इस सब चारितको उसके पुत्रने भलीप्रकार देखकर, खेलसे विरागकी दाता शिवपूजाका विधान किया ॥ २९ ॥ उस शून्य शिविरमें
शिविरके निकट एक सुन्दर पाषाण लाकर शिवलिंग स्थापित किया ॥ ३० ॥ जो कुछ पुष्प आदि अपने हाथ लगें, उन सबको ला और शंक
रको स्नान कराकर भक्तिपूर्वक शिवकी पूजा करता ॥ ३१ ॥ गन्ध, अलंकार, वस्त्र, धूप, दीप, अक्षत चढ़ाता और कृत्रिम, दिव्य नैवेद्यसे भोग

लगाताथा ॥ ३२ ॥ वारंवार मनोहर पत्र, पुष्पोंसे शंकरका पूजन करके अनेक प्रकारका नृत्य और वारंवार प्रणाम करताथा ॥ ३३ ॥ अनन्य चित्तसे पूजन करतेहुए अपने पुत्रको उसकी माताने प्रणयसे भोजनके निमित्त बुलाया ॥ ३४ ॥ उसका मन शिवपूजामें लगा था, इस कारण माताके बुलानेपरभी वह भोजन करने न गया, तब माता स्वयं आई ॥ ३५ ॥ और शिवजीके आगे नेत्र मूँदकर बैठेहुए अपने पुत्रको देखकर क्रोधसे हाथ पकड़ा और ताड़न किया ॥ ३६ ॥ बहुत खेंचने और ताड़न करनेपरभी जब वह भोजन करने न

भूयोभूयःसमभ्यर्च्यपत्रैःपुष्पैर्मनोरमैः ॥ नृत्यंचविविधंकृत्वाप्रणनामपुनःपुनः ॥३३॥ एवंपूजांप्रकुर्वाणंशिवस्यानन्यमानसम् ॥ सापुत्रं प्रणयाद्गोपीभोजनायसमाह्वयत् ॥ ३४ ॥ मात्राहूतोपिबहुशःसपूजासक्तमानसः ॥ बालोपिभोजनंनैच्छत्तदामातास्वयंययौ ॥ ३५ ॥ तंविलोक्यशिवस्याग्रेनिषण्णंमीलितेक्षणम् ॥ चकर्षपाणिंसंगृह्यकोपेनसमताडयत् ॥ ३६ ॥ आकृष्टस्ताडितोवापिनागच्छत्स्वसुतो यदा ॥ तांपूजांनाशयामासक्षिस्वालिंगंविदूरतः ॥ ३७ ॥ हाहेतिरुदमानंतंनिर्भर्त्स्यस्वसुतंतदा ॥ पुनर्विवेशस्वगृहंगोपीरोषसमन्विता ॥ ३८ ॥ मात्राविनाशितांपूजांदृष्ट्वादेवस्यशूलिनः ॥ देवदेवेतिचुक्रोशनिपपातसबालकः ॥ ३९ ॥ प्रनष्टसंज्ञःसहसाबाष्पपूरपरिप्लुतः ॥ लब्धसंज्ञोमुहूर्तेनचक्षुषीउदमीलयत् ॥ ४० ॥

गया, तब क्रोधमें आकर उसकी माताने सब पूजाको नष्ट भ्रष्ट करके शिवलिंगको कुछ दूर फेंकदिया ॥ ३७ ॥ हाहाकार करते हुए बालकको घुडककर क्रोधयुक्त वह गोपी फिर अपने घरमें चलीगई ॥ ३८ ॥ शिवजीकी पूजाको माताके द्वारा विनाश हुई देखकर देव, देव, इसप्रकार उच्चारण किया और वह बालक पृथ्वीपर गिरपडा ॥ ३९ ॥ सहसा उसकी चेतना नष्ट होगई, नेत्रोंमें आंसूभर आये, फिर मुहूर्त्त

मात्रमें चेतना हुई और उसने अपने दोनों नेत्र खोल लिये ॥ ४० ॥ वहाँ मणिस्तंभोंसे विराजित सुवर्णके कपाट और ध्वजापताकाओंसे युक्त, बडे कीमती नीलम और हीरोंसे व्याप्त ॥ ४१ ॥ विचित्र और तपायेहुए सुवर्णके अनेक कलशोंसे शोभित और प्रकाशमान स्फटिकके अनेक स्थानोंसे शोभायमान मनोहर शिवालयको उस बालकने देखा, और शिवालयमें सिंहासनपर रत्नोंसे युक्त शिवलिंगका दर्शन किया ॥ ४२ ॥ इसप्रकार अचानक देखकर वह मनमें डर और आश्चर्य करके सन्तोषसे आनन्दके समुद्रमें निमग्न हुएके समान होगया ॥ ४३ ॥ और शिव

ततोमणिस्तंभविराजमानंहिरण्मयद्वारकपाटतोरणम् ॥ महार्हनीलामलवज्रवेदिकंतदैवजातंशिबिरंशिवालयम् ॥ ४१ ॥ संततहेमकलशै र्बहुभिर्विचित्रैःप्रोद्भासितस्फटिकसौधतलाभिरामम् ॥ रम्यंचतच्छिवपुरंवरपीठमध्येलिंगंचरत्नसहितंसददर्शबालः ॥ ४२ ॥ सदृष्ट्वासहसो त्थायभीतोविस्मितमानसः ॥ निमग्नइवसंतोषात्परमानंदसागरे ॥ ४३ ॥ विज्ञायशिवपूजायामाहात्म्यंतत्प्रभावतः ॥ ननामदंडवद्भूमौ स्वमातुरघशांतये ॥ ४४ ॥ देवक्षमस्वदुरितंममनमातुरुमापते ॥ मूढायास्त्वामजानंत्याःप्रसन्नोभवशंकर ॥ ४५ ॥ यद्यस्तिमयियत्किं चित्पुण्यंत्वद्भक्तिसंभवम् ॥ तेनापिशिवमेमातातवकारुण्यमाप्नुयात् ॥ ४६ ॥ इतिप्रसाद्यगिरिशंभूयोभूयःप्रणम्यच ॥ सूर्येचास्तंगते बालोनिर्जगामशिवालयात् ॥ ४७ ॥

पूजाके माहात्म्यको जानकर उनके प्रभावसे अपनी माताके पापकी शान्तिके निमित्त शंकरको प्रणाम और दंडवत् करनेलगा ॥ ४४ ॥ कि, हे देव ! हे उमापते ! मूढ और तुमको नहीं जाननेवाली मेरी माताका अपराध क्षमा करो और हे शंकर ! मेरे ऊपर प्रसन्न होओ ॥ ४५ ॥ हे शिव ! यदि मुझमें तुम्हारी कुछभी भक्ति और पुण्य है, उसी पुण्य और भक्तिके प्रभावसे मेरी माताके ऊपर करुणा करो ॥ ४६ ॥ इसप्रकार शंकरको प्रसन्न

और बारंबार प्रणामकरके वह बालक सूर्य्यके अस्ताचलको प्राप्त होनेपर शिवालयसे निकलकर चलदिया ॥ ४७ ॥ घर जाकर देखा तो इंद्रके स्थानके समान बनाहुआ शिबिर दीखा, सुवर्णका बनाहुआ अनेक प्रकारके ऐश्वर्य्यसे प्रकाशित, इसप्रकारसे शोभायमान उस प्रासादको देखकर प्रदोषके समय वह बालक प्रसन्नतापूर्वक घरके भीतर घुसा तो वहां अनेक मणियोंसे आकीर्ण, सुवर्णराशिके समान उज्ज्वल स्थानपर ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ श्वेतशय्या पर स्थित, भयरहित और ईश्वरका स्मरण करतीहुई अपनी माताको देखा ॥ ५० ॥ रत्नालंकारोंसे प्रकाशित शरीरवाली और दिव्यवस्त्र धारण

सोंतःप्रविश्यभवनंमोदमानेनिशामुखे ॥ अथापश्यत्स्वशिबिरंपुरंदरपुरोपमम् ॥ सद्योहिरण्मयीभूतंविचित्रविभवोज्ज्वलम् ॥ ४८ ॥ महार्हरत्नपर्य्यंकेसितशय्यामधिश्रि तांगोंदिव्यांबरविराजिनीम् ॥ दिव्यलक्षणसंपन्नांसाक्षात्सुरवधूमिव ॥ ५१ ॥ जवेनोत्थापयामाससंभ्रमोत्फुल्ललो चनः ॥ अंबजागृहिभद्रंतेपश्येदंमहदद्भुतम् ॥ ५२ ॥ इतिप्रबोधितागोपीस्वपुत्रेणमहात्मना ॥ ससंभ्रमंसमुत्थायतत्सर्वंप्रत्यवेक्षत ॥ ५३ ॥ अपूर्व मिवचात्मानमपूर्वमिवबालकम् ॥ अपूर्वंचस्वसदनंदृष्ट्वासीत्सुखविह्वला ॥ ५४ ॥

महामणिगणाकीर्णहेमराशिसमुज्ज्वलम् ॥ ४९ ॥ तत्रापश्यत्स्वजननींस्मरंतीमकुतोभयाम् ॥ ...॥ ५० ॥ रत्नालंकारदीप्तांगीं

कियेहुए, दिव्यलक्षणसम्पन्न और साक्षात् देवांगनाके समान अपनी माताको ॥ ५१ ॥ भ्रमसे फूलगये हैं नेत्र जिसके ऐसे उस बालकने वेगसे जगाया, हे मातः ! तुम्हारा कल्याण होवे , उठो, और इस आश्चर्यको देखो ! ॥ ५२ ॥ इसप्रकार अपने महात्मा पुत्रकेद्वारा जगाई हुई वह गोपी आश्चर्यपूर्वक उठकर उस सब ऐश्वर्यको देखनेलगी ॥ ५३ ॥ अपने आपको बालकको और अपने घरको अपूर्वभूतके समान देखकर सुखसे

विह्वल होगई ॥ ५४ ॥ शंकरके सम्पूर्ण प्रसादको पुत्रके मुखसे सुनकर बहुत प्रसन्न हुई और जो राजा रातदिन शंकरका पूजनकर रहाथा, उससे भी जाकर कहा ॥ ५५ ॥ वह राजाभी रात्रिमें नियम समाप्तकरके जलदीसे उस गोपीके स्थानपर आया और माणिक्य नामक श्रेष्ठ मणियोंसे उज्ज्वल गोपवधूके घरको देखकर ॥ ५६ ॥ मंत्री और पुरोहितसहित वह राजा मुहूर्त्तमात्र विस्मित रहा और फिर आनन्दमय होगया ॥५७॥ प्रेमके मारे नेत्रोंसे जल गिरातेहुए उस राजाने उस बालकको चिपटालिया, इसप्रकार अद्भुत आकारवाले शिवमाहात्म्यके कीर्त्तन ॥ ५८ ॥ और इस

श्रुत्वापुत्रमुखात्सर्वंप्रसादंगिरिजापतेः ॥ राज्ञेविज्ञापयामासयोभजत्यनिशंशिवम् ॥ ५५ ॥ सराजासहसागत्यसमाप्तनियमोनिशि गोपवध्वाश्चसदनंमाणिक्यवरकोज्ज्वलम् ॥ ५६ ॥ दृष्ट्वामहीपतिःसर्वंसामात्यःसपुरोहितः ॥ मुहूर्त्तंविस्मितधृतिःपरमानंदनिर्भरः ॥ ५७ ॥ प्रेम्णाबाष्पजलंमुंचन्परिरेभेतमर्भकम् ॥ एवमत्यद्भुताकाराच्छिवमाहात्म्यकीर्त्तनात् ॥ ५८ ॥ पौराणसंभ्रमाच्चैवसारात्रिःक्षणतामगात् ॥ अथप्रभातेयुद्धायपुरंसंरुध्यसंस्थिताः ॥ ५९ ॥ राजानश्चारवक्रेभ्यःशुश्रुवुःपरमद्भुतम् ॥ तेत्यक्तवैराः सहसाराजानश्चकिताभृशम् ॥ ६० ॥ न्यस्तशस्त्रानिविविशुश्चंद्रसेनानुमोदिताः ॥ तांप्रविश्यपुरींरम्यांमहाकालंप्रणम्यच ॥ ६१ ॥ तद्गोपवनितागेहमाजग्मुः सर्वभूभृतः ॥ तेतत्रचंद्रसेनेनप्रत्युद्गम्याभिपूजिताः ॥ ६२ ॥

कथाके पुरातन संभ्रमसे वह रात्रि क्षणमात्रमें बीतगई, प्रातःकाल होतेही युद्धके निमित्त घेरलिया है पुर जिन्होंने ऐसे ॥ ५९ ॥ उन राजाओंनेभी दूतोंके मुखसे इस परम आश्चर्यको सुना और वैर त्यागकर सब राजा बहुत आश्चर्य करनेलगे ॥ ६० ॥ उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक शस्त्र त्यागकर चन्द्रसेनराजाके निकटको गमन किया, उस मनोहर पुरीमें प्रवेश और महाकाल नामक शंकरको प्रणाम करके ॥ ६१ ॥ सब राजा उस गोपवधूके घरगये,

वहाँ राजा चन्द्रसेनने प्रत्युद्गमन करके उनका पूजन किया ॥ ६२ ॥ और बहुमूल्य आसनोंपर बैठाया, बहुमूल्य आसनोंपर बैठेहुए वे राजा प्रीतिसे आनन्द और विस्मित होगये; गोपपुत्रकी प्रसन्नताके निमित्त उत्पन्नहुए शिवालय ॥ ६३ ॥ और शिवलिंगको देखकर महाशिवमें परमप्रीति करने लगे उन सब राजाओंने प्रसन्नतापूर्वक गोपकुमारके निमित्त ॥ ६४ ॥ वस्त्र, सुवर्ण, रत्न, गोमहिषी आदि धन, हाथी, घोडे, रथ सुवर्णके छत्र, और सवारियोंपर ढकनेके वस्त्र ॥ ६५ ॥ अनेक दास, दासी दिये, जो जो जिस जिस देशमें गोप रहतेथे ॥६६॥ उन सबका राजा उन सब राजाओंने

महार्हविष्टरगताःप्रीत्यानंदन्सुविस्मिताः ॥ गोपसूनोः प्रसादायप्रादुर्भूतंशिवालयम् ॥ ६३ ॥ लिंगंचवीक्ष्यसुमहच्छिवेचक्रुःपरांमतिम् ॥ तस्मैगोपकुमारायप्रीतास्तेसर्वभूभुजः ॥ ६४ ॥ वासोहिरण्यरत्नानिगोमहिष्यादिकंधनम् ॥ गजानश्वान्रथान्रौक्मान्छत्रयानपरिच्छदान् ॥ ६५ ॥ दासान्दासीरनेकांश्चददुः शिवकृपार्थिनः ॥ येयेसर्वेषुदेशेषुगोपास्तिष्ठंतिभूरिशः ॥ ६६ ॥ तेषांतमेवराजानंचक्रिरेसर्वपार्थिवाः ॥ अथास्मिन्नंतरेसर्वैस्त्रिदशैरभिपूजितः ॥ ६७॥ प्रादुर्बभूवतेजस्वीहनुमान्वानरेश्वरः ॥ तस्याभिगमनादेवराजानोजातसंभ्रमाः ॥ ॥ ६८ ॥ प्रत्युत्थायनमश्चक्रुर्भक्तिनम्रात्ममूर्त्तयः ॥ तेषांमध्येसमासीनःपूजितःप्लवगेश्वरः ॥ ६९ ॥ गोपात्मजं समाश्लिष्यराज्ञोवीक्ष्येदमब्रवीत् ॥ सर्वेशृणुतभद्रंवोराजानोयेचदेहिनः ॥ ७० ॥

उस गोपपुत्रको बनादिया, इसी अवसरमें देवताओंसे पूजित ॥ ६७ ॥ तेजस्वी और वानरोंके स्वामी महावीरजीका प्रादुर्भाव हुआ, उनके उत्पन्न होनेसे सब राजा आश्चर्य करनेलगे ॥ ६८ ॥ और भक्तिपूर्वक उठकर सबने प्रणाम किया, उनके बीचमें बैठकर पूजितहुए महावीरजी ॥ ६९ ॥ गोपपुत्रको आलिंगनकर राजाको देखकर बोले कि, हे देहधारी राजाओ ! तुम्हारा कल्याण होवे, मेरा वचन सुनो ॥ ७० ॥

शिवपूजाके विना अन्यगति नहीं है, देखो यह गोपकुमार प्रारब्धके योगसे शनिप्रदोषको ॥ ७१ ॥ विना मंत्रकेही शंकरका पूजन करके कल्याण को प्राप्तहुआ यह शिवपूजन शनिप्रदोषमें सब प्राणियोंको बडा दुर्लभ है ॥ ७२ ॥ उसमेंभी कृष्णपक्षमें शनिप्रदोषके आनेपर तो बहुतही दुर्लभ है, यह गोपकुमार गोपोंकी कीर्त्तिको बढानेवाला होगा ॥ ७३ ॥ और इसके आठवें वंशमें महायशस्वी नन्द नाम गोप उत्पन्न होगा, उस घरमें भगवान् कृष्ण स्वयं पुत्ररूपसे उत्पन्न होंगे ॥ ७४ ॥ और आजसे लेकर यह गोपकुमार श्रीकर नामसे संसारमें विख्यात होगा ॥ ७५ ॥ फिर सूतजी ऋषियोंसे कहनेलगे कि, इसप्रकार वे महावीरजी उस गोपकुमारको शिवपूजाका उपदेश देकर वहीं अन्तर्द्धान होगये ॥ ७६ ॥ और वे सब राजाभी प्रसन्नतापूर्वक पूजितहुए चन्द्रसेन राजाको समझाकर अपने २ देशोंको चलेगये॥ ७७॥ वह महातेजस्वी श्रीकरभी महावीरजीके उपदेशसे धर्मात्मा

शिवपूजामृतेनान्यागतिरस्तिशरीरिणाम् ॥ एषगोपसुतोदिष्टचाप्रदोषेमंदवासरे ॥ ७१ ॥ अमंत्रेणापिसंपूज्यशिवंशिवमवाप्तवान् ॥ मंदवारेप्रदोषेऽयंदुर्लभःसर्वदेहिनाम् ॥ ७२ ॥ तत्रापिदुर्लभतरःकृष्णपक्षेसमागते ॥ एषपुण्यतमोलोकेगोपानांकीर्तिवर्धनः ॥ ७३ ॥ अस्यवंशेष्टमोभावीनंदोनाममहायशाः ॥ प्राप्स्यतेतस्यपुत्रत्वंकृष्णोनारायणःस्वयम् ॥ ७४ ॥ अद्यप्रभृतिलोकेस्मिन्नेषगोपालनंदनः ॥ नाम्नाश्रीकरइत्युच्चैर्लोकेख्यातिंगमिष्यति ॥ ७५ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ एवमुक्त्वांजनीसूनुस्तस्मैगोपकसूनवे ॥ उपदिश्यशिवाचारंतत्रैवांतरधीयत ॥ ७६ ॥ तेचसर्वेमहीपालाःसंहृष्टाःप्रतिपूजिताः ॥ चंन्द्रसेनंसमामंत्र्यप्रतिजग्मुर्यथागतम् ॥ ७७ ॥ श्रीकरोपिमहातेजाउपादिष्टोहनूमता ॥ ब्राह्मणैःसहधर्मज्ञैश्चक्रेशंभोःसमर्हणम् ॥ ७८ ॥

शरीरधारियोंको ब्राह्मणोंके साथ शंकरका पूजन करनेलगा॥७८॥ कुछ समयके उपरांत वह श्रीकर और चंद्रसेन राजा भक्तिपूर्वक शंकरकी आराधनाकर अंतमें
शिवलोकको गये॥७९॥परम पवित्र,यश बढ़ानेवाला,पुण्य और महाऋद्धिका बढ़ानेवाला, पापसमूहका नाश करनेवाला और शंकरके चरणोंकी भक्ति बढा
नेवाला यह आख्यान तुमसे कहा ॥८०॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां पंचमोऽध्यायः ॥५॥ अथ षष्ठोऽध्यायः
॥ ६ ॥ ऋषि बोले ! हे सूतजी ? जो तुमने सम्पूर्ण पाप नष्ट करनेवाला शिवजीका माहात्म्य वर्णन किया, वह आख्यान बड़ा अद्भुत है ॥१॥ फिरभी
हमारे सुननेकी यह इच्छा है; कि, प्रदोषके समय महात्माओंके द्वारा पूजितहुए भगवान् शंभु ॥ २ ॥ उनको क्या सिद्धि देते हैं, हे सुव्रत ! यह हमसे
कहो ! आपके मुखसे बारंबार सुनकरभी हमको तृप्ति नहीं होती तृष्णाही बढती जातीहै ॥ ३ ॥ इसप्रकार शौनकादिक ऋषियोंके पूँछनेपर सूतजी
बोले । हे महाप्राज्ञों ! संसारमें विख्यात तुमने अच्छा प्रश्न किया, इसलिये शिवपूजाके महाफलको मैं तुमसे कहताहूँ ॥ ४ ॥ त्रयोदशीके सायंका

कालेनश्रीकरः सोपिचंद्रसेनश्चभूपतिः ॥ समाराध्यशिवंभक्त्याप्रापतुःपरमंपदम् ॥ ७९ ॥ इदंरहस्यंपरमंपवित्रंयशस्करंपुण्यमहर्द्धिवर्ध
नम् ॥ आख्यानमाख्यातमघौघनाशनंगौरीशपादांबुजभक्तिवर्धनम् ॥८०॥ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेपञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥
॥ ऋषयऊचुः ॥ यदुक्तंभवतासूतमहदाख्यानमद्भुतम् ॥ शंभोर्माहात्म्यकथनमशेषाघहरंपरम् ॥ १ ॥ भूयोपिश्रोतुमिच्छामस्तदेवसुस
माहिताः ॥ प्रदोषेभगवाञ्छंभुःपूजितस्तुमहात्मभिः ॥ २ ॥ सम्प्रयच्छतिकांसिद्धिमेतन्नोब्रूहिसुव्रत ॥ श्रुतमप्यसकृत्सूतभूयस्तृष्णाप्रवर्ध
ते ॥ ३ ॥ ॥ सूत उवाच ॥ साधुपृष्टंमहाप्राज्ञभवद्भिर्लोकविश्रुतैः ॥ अतोहंसंप्रवक्ष्यामिशिवपूजाफलंमहत् ॥ ४ ॥ त्रयोदश्यांतिथौसायं
प्रदोषः परिकीर्त्तितः ॥ तत्रपूज्योमहादेवोनान्योदेवःफलार्थिभिः ॥ ५ ॥

लमें प्रदोष होताहै, उससमय फल चाहनेवालोंको केवल महादेवजीकी पूजा करनी चाहिये, अन्य देवकी नही ॥ ५ ॥ प्रदोषसमयका माहात्म्य वर्णन
करनेको कौन समर्थ है, क्योंकि प्रदोपके समय सब देवता शिवजीके निकट स्थित रहतेहैं ॥ ६ ॥ और उससमय कैलासपर्वतपर देवताओंसे पूजित
श्रीशंकर नृत्य करतेहैं ॥ ७ ॥ इसलिये उस समय धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी इच्छावालोंको शिवपूजा, जप, हवन, उनकी कथा और उनके गुणों
की स्तुति नित्यप्रति करनी चाहिये ॥ ८ ॥ दारिद्र्यरूप अन्धकारमें मग्न और संसारसे डरनेवाले, तथा भवसागरमें मग्न, इन सबको प्रदोषकालकी पूजा

प्रदोपपूजामाहात्म्यंकोनुवर्णयितुंक्षमः ॥ यत्रसर्वेपिविबुधास्तिष्ठंतिगिरिशांतिके ॥ ६ ॥ प्रदोपसमयेदेवःकैलासेरजतालये ॥ करोतिनृत्यं
विबुधैरभिष्टुतगुणोदयः ॥ ७ ॥ अतःपूजाजपोहोमस्तत्कथातद्गुणस्तवः ॥ कर्त्तव्योनियतंमर्त्यैश्चतुर्वर्गफलार्थिभिः ॥ ८ ॥ दारिद्र्यति
मिरांधानांमर्त्यानांभवभीरुणाम् ॥ भवसागरमग्नानांशवोंयंपारदर्शनः ॥ ९ ॥ दुःखशोकभयार्त्तानांक्लेशनिर्वाणमिच्छताम् ॥ प्रदोपेपार्व
तीशस्यपूजनंमङ्गलायनम् ॥ १० ॥ दुर्बुद्धिरपिनीचोपिमन्दभाग्यःशठोपिवा॥ प्रदोपेपूज्यदेवेशंविपद्भ्यःसप्रमुच्यते ॥ ११ ॥ शत्रुभिर्ह
न्यमानोपिदश्यमानोपिपन्नगैः ॥ शैलैराक्रम्यमाणोपिपतितोपिमहांबुधौ ॥ १२ ॥ आविद्धकालदंडोपिनानारोगहतोपिवा ॥ नविनश्यति
मर्त्योसौप्रदोपेगिरिशार्चनात् ॥ १३ ॥

पारकर देतीहै ॥ ९ ॥ दुःख, शोक और भयसे व्याकुल तथा क्लेशसे छूटनेवाले पुरुषोंको प्रदोपके समय शंकरका पूजन कल्याण देताहै ॥ १० ॥ दुर्बुद्धि,
नीच, मन्दभागी, और शठभी प्रदोषके समय शिवका पूजन कर विपत्तियोंसे छूट जाताहै ॥ ११ ॥ शत्रुओंके मारने, सर्पोंके डसनें, पर्वतोंसे आक्रम्यमाण
होने, महासमुद्रमें गिरने, कालदंडसे विंधने और अनेक रोगोंके आक्रमण होनेपरभी प्रदोपमें शंकरका पूजन करनेसे मनुष्य नष्ट नहीं होता ॥ १२ ॥ १३ ॥

शिवके पूजनसे दारिद्र्य, मरण, दुःख और पर्वतके समान ऋणभारसे दूर होकर पुरुष सम्पत्तियुक्त होजाता है ॥ १४ ॥ इस विषयमें बड़े पुण्यका देने वाला एक पुरातन इतिहास वर्णन करताहूँ, जिसको सुनकर सब मनुष्य कृतकृत्य होजायँगे ॥ १५ ॥ विदर्भदेशमें सब धर्मोंमें रत, सुशील और सत्यसंकल्प सत्यरथ नामवाला एक राजा था ॥ १६ ॥ हे मुनिश्रेष्ठो ! उसने बहुत समयतक पुत्रके समान प्रजाका सुखसे पालन किया ॥१७॥

दारिद्र्यंमरणंदुःखमृणभारंनगोपमम् ॥ सद्यो विधूयसंपद्भिःपूज्यतेशिवपूजनात् ॥ १४ ॥ अत्रवक्ष्येमहापुण्यमितिहासंपुरातनम् ॥ यं श्रुत्वामनुजाःसर्वेप्रयांतिकृतकृत्यताम् ॥ १५ ॥ आसीद्विदर्भविषयेनाम्नासत्यरथोनृपः ॥ सर्वधर्मरतोधीरःसुशीलःसत्यसंगरः ॥ १६ ॥ तस्यपालयतोभूमिंधर्मेणमुनिपुंगवाः ॥ व्यतीयायमहान्कालःसुखेनैवमहामते ॥ १७ ॥ अथतस्यमहीभर्तुर्बभूवुःशाल्वभूभुजः ॥ शत्रवश्चोद्धतबलादुर्मर्षणपुरोगमाः ॥ १८ ॥ कदाचिदथतेशाल्वाःसंनद्धबहुसैनिकाः ॥ विदर्भनगरींप्राप्यरुरुधुर्विजिगीषवः ॥ १९ ॥ दृष्ट्वा निरुध्यमानांतांविदर्भाधिपतिःपुरीम् ॥ योद्धुमभ्याययौतूर्णंबलेनमहतावृतः ॥ २० ॥ तस्यतैरभवद्युद्धंशाल्वैरपिबलोद्धतैः ॥ पातालेपन्नगेन्द्रस्यगन्धर्वैरिवदुर्मदैः ॥ २१ ॥

कुछ समयके उपरान्त शाल्वके दुर्मर्षण आदि राजाओंने विशेष बल होनेके कारण उससे शत्रुता करली ॥ १८ ॥ और उन शाल्वआदि राजाओंने बहुतसी सेना लेकर उस सत्यरथको जीतनेकी इच्छासे विदर्भनगरीको आकर चारों ओरसे घेर लिया ॥ १९ ॥ चारों ओरसे रुकीहुई अपनी नगरीको देखकर राजाभी वेगसे बड़े बलपूर्वक अर्थात् बहुत सेना लेकर लड़नेको गया ॥ २० ॥ जिसप्रकार पातालमें वासुकिका दुर्मद गन्धर्वोंके साथ

युद्ध हुआथा, इसीप्रकार उस राजा और बलसे उद्धत उन शाल्वोंका युद्ध हुआ ॥ २१ ॥ उस युद्धमें राजा सत्यरथने बड़ा भयंकर युद्ध किया, अन्तमें उन शाल्वोंके हाथसे मारा गया ॥ २२ ॥ और राजाके वीर मन्त्रीभी निहत हुए, बाकी राजाकी सेना भाग निकली ॥ २३ ॥ उस शत्रुसेनाके मन्त्री आदि जब युद्ध करने लगे और नगरीमें युद्धका बड़ा कोलाहल मचने लगा तब ॥ २४ ॥ उस सत्यरथ राजाकी एक स्त्री शोकसे सन्तप्त होकर बड़े यत्नपूर्वक राजमहलसे निकली ॥ २५ ॥ रात्रिके समय वह गर्भवती राजपत्नी शोकसे व्याकुल हुई, पश्चिम दिशाकी ओर चली ॥ २६ ॥

विदर्भनृपतिःसोथकृत्वायुद्धंसुदारुणम् ॥ प्रनष्टोरुबलैःशाल्वैर्निहतोरणमूर्धनि ॥ २२ ॥ तस्मिन्महारथेवीरेनिहतेमन्त्रिभिःसह ॥ दुद्रुवुः समरेभग्नाहतशेषाश्चसैनिकाः ॥ २३ ॥ अथयुद्धेभिविरतेनदत्सुरिपुमंत्रिषु ॥ नगर्यांयुध्यमानायांजातेकोलाहलेरवे ॥ २४ ॥ तस्यसत्यरथस्यैकाविदर्भाधिपतेःसती ॥ भूरिशोकसमाविष्टाकाचिद्यत्नाद्विनिर्ययौ ॥ २५ ॥ सानिशासमयेयत्नादंतर्वत्नीनृपांगना ॥ निर्गताशोकसंतप्ता प्रतीचींप्रययौदिशम् ॥ २६ ॥ अथप्रभातेमार्गेणगच्छंतीसहसासती ॥ अतीत्यदूरमध्वानंददर्शविमलंसरः ॥ २७ ॥ तत्रागत्यवरारोहा तप्तातापेनभूयसा ॥ विलसंतंसरस्तीरेछायावृक्षंसमाश्रयत् ॥ २८ ॥ तत्रदैववशाद्राज्ञीविजनेतरुकुट्टिमे ॥ असूतसमयेसाध्वीमुहूर्तेसद्गुणान्विते ॥ २९ ॥ अथसाराजमहिषीपिपासाभिहताभृशम् ॥ सरोवतीर्यचार्वंगीग्रस्ताग्राहेणभूयसा ॥ ३० ॥

और रात्रिमें बड़ी शीघ्रतासे बहुत मार्ग बिताया, प्रभात होतेही उसने अचानक एक निर्मल सरोवर देखा ॥ २७ ॥ वह सुन्दरमुखवाली राजपत्नी बड़े तापसे तप्त होकर उस सरोवरपर आई और सरोवरके किनारे एक वृक्षकी सघन छायामें बैठगई ॥ २८ ॥ प्रारब्धके योगसे उस निर्जन वनमें वृक्षके नीचे सुन्दर मुहूर्त्तमें उसीसमय उसके पुत्र उत्पन्न हुआ ॥ २९ ॥ इस अवसरमें उसको बहुत प्यास लगी और पुत्रको अकेला छोड़ सरोवरके तटपर

जल पीनेके निमित्त गई, जभी उसने जल पीनाचाहा कि, उसी अवसरमें एक बडे ग्राह (नाका) ने उसे ग्रास लिया ॥ ३० ॥ निर्बल और तत्काल उत्पन्न, माता पिताहीन वह बालक सरोवरके किनारे भूंख प्याससे व्याकुल होकर ऊंचे स्वरसे रोनेलगा ॥ ३१ ॥ उसीसमय उत्पन्न हुए उस बालकके इसप्रकार रुदन करनेपर भाग्यके वशसे कोई ब्राह्मणकी स्त्री शीघ्रही वहां आई ॥ ३२ ॥ उसके पासभी एक छोटा बालक था, उसके धन न था और पातहीन थी, इसकारण घरघर भीख मांगती फिरतीथी ॥ ३३ ॥ बन्धुहीन और एकपुत्रवाली भीख मांगनेवाली उमा नाम ब्राह्मणकी स्त्रीने उस

जातमात्रःकुमारोपिविनष्टपितृमातृकः ॥ रुरोदोच्चैःसरस्तीरेक्षुत्पिपासार्दितोऽबलः ॥३१॥ तस्मिन्नेवंक्रंदमानेजातमात्रेकुमारके ॥ काचिदभ्याययौशीघ्रंदिष्ट्याविप्रवरांगना ॥३२॥ साप्येकहायनंबालमुद्वहन्तीनिजात्मजम् ॥ अधनाभर्तृरहितायाचमानागृहेगृहे ॥३३॥ एकात्मजाबंधुहीनायाच्ञामार्गवशंगता ॥ उमानामाद्विजसतीददर्शनृपनंदनम् ॥ ३४ ॥ साहष्ट्वाराजतनयंसूर्यबिंबमिवच्युतम् ॥ अनाथमेनंक्रंदंतंचिंतयामासभूरिशः ॥ ३५ ॥ अहोसुमहदाश्चर्यमिदंदृष्टंमयाधुना ॥ अच्छिन्ननाभिसूत्रोऽयंशिशुर्माताक्वगता ॥ ३६ ॥ पितानास्तिनचान्योस्तिनास्तिबंधुजनोपिवा ॥ अनाथःकृपणोबालःशेतेकेवलभूतले ॥ ३७ ॥ एपचांडालजोवापिशूद्रजोवैश्यजोपिवा ॥ विप्रात्मजोवानृपजोज्ञायतेकथमर्भकः ॥ ३८ ॥

राजपुत्रको देखा ॥ ३४ ॥ सूर्य्यबिंबके समान च्युत हुए, अनाथ और रुदन करतेहुए राजपुत्रको देखकर उसने बहुत चिन्ताकी ॥ ३५ ॥ कि, अहो ! इससमय मैने यह बडा आश्चर्य देखा; इस बालकका तो अभी नाल छेदनभी नही हुआहै, इसे छोड इसकी माता कहाँ चलीगई है ॥ ३६ ॥ न इसका पिता है न और कोई बन्धुहै, यह अनाथ और दुःखी बालक अकेलाही पृथ्वीपर सोता है ॥ ३७ ॥ यह बालक चांडालका है ?

शूद्रका है, वैश्यका है, ब्राह्मणका है, अथवा क्षत्रियका है यह ज्ञान मुझको किसप्रकार होवै इसप्रकार वह ब्राह्मणी विचार करनेलगी ॥ ३८ ॥ और बोली कि, अपने पुत्रके समान इसका पोषण करूंगी, किंतु विना इसका कुल जाने स्पर्श नही करसकती ॥ ३९ ॥ इसप्रकार उस ब्राह्मणकी स्त्रीके विचार करनेपर ॥ ४० ॥ कोई एक भिक्षुक साक्षात् शंकरके समान स्वयं आया और उससे बोला कि, हे विप्रभामिनि ! दुःखी मत हो ॥ ४१ ॥ हे सुभ्रु ! हृदयका सन्देह छोडकर इस बालककी रक्षाकर, थोडेही समयमें तुझको इस बालकसे परम कल्याण होगा ॥ ४२ ॥ इसप्रकार कहकर वह

शिशुमेनंसमुद्धृत्यपुष्णाम्यौरसवद्ध्रुवम् ॥ किंत्वविज्ञातकुलजंनोत्सहेस्प्रष्टुमुत्तमम् ॥ ३९ ॥ इतिमीमांसमानायांतस्यांविप्रवरस्त्रियाम् ॥ ४० ॥ कश्चित्समाययौभिक्षुःसाक्षाद्देवःशिवःस्वयम् ॥ तामाहभिक्षुवर्योथविप्रभामिनिमाखिदः ॥ ४१ ॥ रक्षैनंबालकंसुभ्रुविसृज्यहृदिसंशयम् ॥ अनेनपरमंश्रेयःप्राप्स्यसेह्यचिरादिह ॥ ४२ ॥ एतावदुक्त्वात्वरितोभिक्षुःकारुणिकोययौ ॥ अथतस्मिन्गतेभिक्षौविश्रब्धा विप्रभामिनी ॥ ४३ ॥ तमर्भकंसमादायनिजमेवगृहंययौ ॥ भिक्षुवाक्येनविश्रब्धासाराजतनयंतथा ॥ ४४ ॥ आत्मपुत्रेणसहशंकृपया पयेपार्थयेत् ॥ एकचक्राह्वयेरम्येग्रामेकृतनिकेतना ॥४५॥ स्वपुत्रंराजपुत्रंचभिक्षान्नेनव्यवर्धयत् ॥ब्राह्मणीतनयश्चैवसराजतनयस्तथा ४६

दयालु भिक्षुक शीघ्रही वहाँसे चलागया, भिक्षुकके जानेके उपरान्त उत्पन्न हुआहै विश्वास जिसको ऐसी वह ब्राह्मणकी स्त्री ॥ ४३ ॥ उस बालकको लेकर अपने घरहीको गई, भिक्षुकके वचनसे विश्वास करके वह उस राजपुत्रको ॥ ४४ ॥ कृपापूर्वक अपने पुत्रके समान पोषण करनेलगी, एकचक्र नामवाले ग्राममें उसने अपना घर बनाया ॥ ४५ ॥ अपने पुत्र और राजपुत्रका भिक्षान्नसे पालन किया, ब्राह्मणीके पुत्र और राजपुत्र इन

दोनोंका ॥ ४६ ॥ ब्राह्मणोंने संस्कार विधिपूर्वक किया और सुपूजित वे दोनों वृद्धिको प्राप्त होनेलगे समयपर उनका उपनयन संस्कार हुआ और
वे दोनों नियममें स्थित हुए ॥ ४७ ॥ प्रतिदिन माताके साथ भिक्षाके निमित्त फिरने लगे, एकसमय उन बालकोंके साथ ॥ ४८ ॥ भिक्षाके नि
मित्त फिरतीहुई वह विप्रपत्नी प्रारब्धके योगसे एक देवालयमें घुसगई वृद्ध मुनियोंसे भरेहुए उस देवालयमें ॥ ४९ ॥ उन दोनों बालकोंको देखकर
बुद्धिमान् शांडिल्य मुनि बोले कि, अहो, दैवबल विचित्र है, अहो, कर्म बडा दुरत्यय है अर्थात् कर्मफलको कोई नही मेंट सकता ॥ ५० ॥ यह

ब्राह्मणैःकृतसंस्कारौववृधातेसुपूजितौ ॥ कृतोपनयनौकालेबालकौनियमेस्थितौ ॥ ४७ ॥ भिक्षार्थंचेरतुस्तत्रमात्रासहदिनेदिने ॥ ताभ्यां
कदाचिद्बालाभ्यांसाविप्रवनितासह ॥ ४८ ॥ भैक्षंचरंतीदैवेनप्रविष्टादेवतालयम् ॥ तत्रवृद्धैःसमाकीर्णेमुनिभिर्देवतालये ॥ ४९ ॥ तौ
दृष्ट्वाबालकौधीमाञ्छांडिल्योमुनिरब्रवीत् ॥ अहोदैवबलंचित्रमहोकर्मदुरत्ययम् ॥ ५० ॥ एषबालोऽन्यजननींश्रितोभैक्ष्येणजीवति ॥
इमामेवद्विजवधूंप्राप्यमातरमुत्तमाम् ॥ ५१ ॥ सहैवाद्विजपुत्रेणद्विजभावंसमाश्रितः ॥ इतिश्रुत्वामुनेर्वाक्यंशांडिल्यस्यद्विजांगना ॥५२॥
साप्रणम्यसभामध्येपर्यपृच्छत्सविस्मया ॥ ब्रह्मन्नेषोऽर्भकोनीतोमयाभिक्षोर्गिराग्रहम् ॥ ५३ ॥ अविज्ञातकुलोह्यापिसुतवत्परिपोष्यते ॥
कस्मिन्कुलेप्रसूतोऽयंकामाताजनकोस्यकः ॥ ५४ ॥

बालक दूसरेकी माताके आश्रित होकर भिक्षासे जीवनको बिताताहै, इस उत्तम द्विजवधूरूप माता ॥ ५१ ॥ और ब्राह्मणपुत्रके साथ रहनेसे ब्राह्मण
भावको प्राप्त होगया है, इसप्रकार शांडिल्यमुनिके वाक्यको सुनकर वह विप्रपत्नी ॥ ५२ ॥ सभाके बीचमें प्रणाम करके आश्चर्यरूपसे बूझनेलगी और
बोली कि, हे ब्रह्मन् ! इस बालकको एक भिक्षुकके कथनसे अपने घरलेआई हूं॥ ५३ ॥किन्तु इसका कुल आजतक नही जानतीहूँ और पुत्रवत् इसका

पोषण कियाहै, यह किस कुलमें उत्पन्न हुआहै, कौन इसकी माता है, कौन इसका पिता है ॥ ५४ ॥ ज्ञानही हैं नेत्र जिनके ऐसे आपसे यह सब सुना चाहतीहूँ॥५५॥इसप्रकार उस ब्राह्मणपत्नीके बूझनेपर वे ज्ञानदृष्टिवाले मुनि उस बालकके पूर्वके जातकर्मका कथन करनेलगे॥५६॥यह विदर्भदेशके राजाका पुत्र है, इसका पिता युद्धमें मारागया, इसकी माताको नाकेने खा लिया, इसप्रकार उन्होंने संपूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया ॥ ५७ ॥ फिर आश्चर्ययुत होकर उस विप्रपत्नीने शांडिल्यमुनिसे बूझा, कि, वह विदर्भाधिपति सम्पूर्ण भोगोंको त्यागकर युद्धमें किसप्रकार मरा ॥ ५८ ॥ और हे महामुने !

सर्वंविज्ञातुमिच्छामिभवतोज्ञानचक्षुषः ॥ ५५ ॥ इतिपृष्टो मुनिःसोथज्ञानदृष्टिर्द्विजस्त्रिया ॥ आचख्यौतस्यबालस्यजातकर्मचपौर्विकम् ॥ ॥ ५६ ॥ विदर्भराजपुत्रत्वंतत्पितुःसमरेमृतिम् ॥ तन्मातुर्नक्रहरणंसाकल्येनन्यवेदयत् ॥ ५७ ॥ अथसाविस्मितानारीपुनःपप्रच्छतंमुनिम् ॥ सराजासकलान्भोगान्हित्वायुद्धेकथंमृतः ॥ ५८ ॥ दारिद्र्यमस्यबालस्यकथंप्राप्तंमहामुने ॥ दारिद्र्यंपुनरुद्धूयकथंराज्यमवाप्स्यति ॥ ५९ ॥ अस्यापिममपुत्रस्यभिक्षान्नेनैवजीवतः ॥ दारिद्र्यशमनोपायमुपदेष्टुंत्वमर्हसि ॥ ६० ॥ ॥ शांडिल्यउवाच ॥ ॥ अमुष्य बालस्यपितासविदर्भमहीपतिः ॥ पूर्वजन्मनिपांड्येशोबभूवनृपसत्तमः ॥ ६१ ॥ सराजासर्वधर्मज्ञःपालयन्सकलांमहीम् ॥ प्रदोषसमये शंभुंकदाचित्प्रत्यपूजयत् ॥ ६२ ॥

इस बालकको दरिद्रता किसप्रकार प्राप्त हुई तथा यह दरिद्रताको दूर करके फिर किसप्रकार राज्यका अधिकारी होगा ॥ ५९ ॥ भिक्षाके अन्नसे जीवन व्यतीत करतेहुए इस (राजपुत्र) और मेरे पुत्रके दारिद्र्य दूर होनेके उपायका उपदेश करनेको तुम समर्थ हो ॥ ६० ॥ इसप्रकार ब्राह्मणीके वचन सुनकर शांडिल्य मुनि बोले, इस बालकका पिता विदर्भाधिपति पूर्वजन्ममें पांड्यदेशका राजा था ॥ ६१ ॥ पूर्वजन्ममें इस सर्वधर्मज्ञ राजाने सम्पूर्ण

पृथिवीकी रक्षा की और कभी प्रदोषके समय शंकरका पूजन किया ॥ ६२ ॥ भक्तिपूर्वक त्रिभुवनेश्वर शंकरका पूजन करतेहुए उसके नगरमें सर्वत्र महान् कलकल शब्द सुनाईदिया ॥ ६३ ॥ उस उत्कट शब्दको सुनकर राजा शंकरका पूजन छोड नगरके नाश होनेकी शंकासे राजभवनोंमें गया ॥ ६४ ॥ इसी अवसरमें उसका महाबल मन्त्री एक सामन्त शत्रुको पकड़कर राजाके निकट आया ॥ ६५ ॥ मन्त्रीके द्वारा लायेहुए उस उद्धत सामन्तशत्रुको देखकर राजाने क्रोधसे उसका शिर काट डाला ॥ ६६ ॥उस राजाने उसीप्रकार शिवपूजनको त्याग दिया और अपने नियमके विना समाप्त

तस्यपूजयतोभक्त्यादेवंत्रिभुवनेश्वरम् ॥ आसीत्कलकलारावःसर्वत्रनगरेमहान् ॥ ६३ ॥ श्रुत्वातमुत्कटंशब्दंराजात्यक्तशिवार्चनः ॥
निर्ययौराजभवनान्नगरक्षोभशंकया ॥६४॥ एतस्मिन्नेवसमयेतस्यामात्योमहाबलः ॥ शत्रुंगृहीत्वासामंतंराजांतिकमुपागमत् ॥ ६५ ॥
अमात्येनसमानीतंशत्रुंसामंतमुद्धतम् ॥ दृष्ट्वाक्रोधेननृपतिःशिरश्छेदमकारयत् ॥ ६६ ॥ सतथैवमहीपालोविसृज्यशिवपूजनम् ॥
असमाप्तात्मनियमश्चकारनिशिभोजनम्॥६७॥ तत्पुत्रोपितथाचक्रेप्रदोषसमयेशिवम् ॥ अनर्चयित्वामूढात्माभुक्त्वासुष्वापदुर्मदः ॥६८॥
जन्मांतरेसनृपतिर्विदर्भक्षितिपोभवत् ॥ शिवार्चनांतरायेणपरैर्भोगांतरेहतः ॥ ६९ ॥ तत्पुत्रोयःपूर्वभवेसोस्मिञ्जन्मनितत्सुतः ॥
भूत्वादारिद्र्यमापन्नःशिवपूजाव्यतिक्रमात् ॥७०॥ अस्यमातापूर्वभवेसपत्नींछद्मनाहनत् ॥ तेनपापेनमहताग्राहेणास्मिन्भवेहता॥७१॥

कियेही रात्रिमें भोजन करलिया ॥ ६७ ॥ उसके पुत्रनेभी इसीप्रकार किया, कि, शिवजीका पूजन विनाकियेही उस दुर्मद मूढात्माने भोजन करलिया और सोगया ॥ ६८ ॥ दूसरे जन्ममें वह राजा विदर्भदेशका अधिपति हुआ, और शिवपूजनमें विघ्न होनेके कारण राज्यभोगोंके पीछे शत्रुओंके हाथसे मारागया ॥ ६९ ॥ पूर्वजन्ममें जो इसका पुत्रथा वही इस जन्ममें भी हुआ और शिवपूजनमें व्यतिक्रम होनेसे दरिद्री हुआ ॥ ७० ॥ इसकी माताने

पूर्वजन्ममें छलसे अपनी सपत्नी (सौत) को मारडाला, उस महापापसे इस जन्ममें इसको ग्राहने भक्षण किया ॥ ७१ ॥ इसप्रकार यह इनकी प्रवृत्ति तुझसे कही, शंकरका पूजन न करनेसे मनुष्य दरिद्रताको प्राप्त होतेहैं ॥ ७२ ॥ इसप्रकार कहकर फिर शांडिल्यमुनि बोले कि, हे विप्रपत्नी ! सत्य, परलोकका हितसार, सम्पूर्ण उपनिषदोंका रहस्य मैं तुझसे कहताहूँ, कि, इस घोर असार संसारमें प्राप्त होकर मनुष्यके लिये भक्तिपूर्वक शिवजीका पूजन करनाही सारहै ॥ ७३ ॥ जो प्राणी प्रदोषके समय शंकरका पूजन नही करते और पूजेहुए शंकरको प्रदोषमें प्रणाम नहीं करते तथा जो

एषाप्रवृत्तिरेतेषांभवत्यैससुदाहृता ॥ अनर्चितोशिवेमर्त्याःप्राप्नुवंतिदरिद्रताम् ॥ ७२ ॥ सत्यंब्रवीमिपरलोकहितंब्रवीमिसारंब्रवीम्युपनिषद्धृदयंब्रवीमि ॥ संसारमुल्बणमसारमवाप्यजंतोःसारोयमीश्वरपदांबुरुहस्यसेवा ॥ ७३ ॥ येनार्चयंतिगिरिशंसमयेप्रदोषेयेनार्चितंशिवमपिप्रणमंतिचान्ये ॥ एतत्कथांश्रुतिपुटैर्नपिबंतिमूढास्तेजन्मजन्मसुभवंतिनरादरिद्राः ॥ ७४ ॥ येवैप्रदोषसमयेपरमेश्वरस्यकुर्वंत्यनन्यमनसोंघ्रिसरोजपूजाम् ॥ नित्यंप्रवृद्धधनधान्यकलत्रपुत्रसौभाग्यसंपदधिकास्तइहैवलोके ॥ ७५ ॥ कैलासशैलभवनेत्रिजगज्जनित्रींगौरींनिवेश्यकनकांचितरत्नपीठे ॥ नृत्यंविधातुमभिवाञ्छतिशूलपाणौदेवाःप्रदोषसमयेऽनुभजंतिसर्वे ॥ ७६ ॥

मूढात्मा पुरुष अपने कर्णपुटोंसे इस कथाका पान नहीं करते वे जन्मजन्ममें दरिद्री होतेहैं ॥ ७४ ॥ जो प्राणी प्रदोषके समय अनन्यभाव अर्थात् एकाग्रचित्तसे शंकरके चरणकमलोंका पूजन करतेहैं वे इसीलोकमें धन, धान्य, स्त्री, पुत्र, सौभाग्य और सम्पत्तिसे सम्पन्न होजातेहैं ॥ ७५ ॥ कैलासपर्वतपर तीनोंलोककी माता पार्वतीजीको रत्नजटित सुवर्णसिंहासनपर बैठाकर प्रदोपके समय जब श्रीशंकर नृत्य करतेहैं, उससमय सम्पूर्ण देवता उनकी

सेवाके निमित्त वही प्राप्त होजाते हैं ॥ ७६ ॥ जब शंकर नृत्य करतेहैं, तब सरस्वती वीणा बजातीहै, इन्द्र वंशी बजातेहैं, ब्रह्माजी दोनों हाथोसे ताल देतेहैं, लक्ष्मीजी गान करतीहैं, विष्णुभगवान् बडी गम्भीर ध्वनिसे मृदंग बजातेहैं, और सब देवता भक्तिपूर्वक चारों ओर हाथ जोड़ खड़े रह तेहैं, इसप्रकार प्रदोषके समय सब देवता शंकरकी सेवामें लगे रहतेहैं ॥ ७७ ॥ और गन्धर्व, यक्ष, पक्षी, सर्प, सिद्ध, साध्य, विद्याधर और अप्सराओंके समूह आदि और जो अन्य तीनलोकमें देवताहैं, वे सब भूतवर्गसमेत प्रदोषके समय कैलासवासी श्रीशंकरके निकट स्थित रहतेहै ॥ ७८ ॥ इस

वाग्देवीधृतवल्लकीशतमखोवेणुंदधत्पद्मजस्तालोन्निद्रकरोरमाभगवतीगेयप्रयोगान्विता ॥ विष्णुःसांद्रमृदंगवादनपटुर्देवाःसमंतात्स्थिताःसेवंतेतमनुप्रदोषसमयेदेवंमृडानीपतिम् ॥ ७७ ॥ गंधर्वयक्षपतगोरगसिद्धसाध्याविद्याधरासुरवराप्सरसांगणाश्च ॥ येन्येत्रिलोकनिलयाः सहभूतवर्गाःप्राप्तेप्रदोषसमयेहरपार्श्वसंस्थाः ॥ ७८ ॥ अतःप्रदोषेशिवएकएवपूज्योथनान्येहरिपद्मजाद्याः ॥ तस्मिन्महेशेविधिनेज्यमानेसर्वेप्रसीदंतिसुराधिनाथाः ॥७९॥ एषतेतनयःपूर्वजन्मनिब्राह्मणोत्तमः ॥ प्रतिग्रहैर्वयोनिन्येनयज्ञाद्यैःसुकर्मभिः ॥८०॥ अतोदारिद्र्यमापन्नःपुत्रस्तेद्विजभामिनी॥तद्दोषपरिहारार्थंशरणंयातुशंकरम्॥८१॥इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेप्रदोषमहिमवर्णनंनामषष्ठोऽध्यायः॥६॥

कारण प्रदोषकालमें विष्णु, ब्रह्मा आदिदेवोंको छोड़ एक शंकरकाही पूजन करे, केवल भक्तिसे विधिपूर्वक शिवपूजा करनेसे सब देवता प्रसन्न होजाते है ॥ ७९ ॥ इसप्रकार कहकर फिर शांडिल्यमुनि बोले कि, हे विप्रपत्नि ! यह तेरा पुत्र पूर्वजन्ममें उत्तम ब्राह्मण था, इसने प्रतिग्रह लेलेकर अवस्था बिताई और सुन्दर यज्ञादिकर्म नहीं किये ॥८०॥ हे द्विजभामिनि ! इसलिये तेरा पुत्र दारिद्री हुआ, उस दोषके दूर करनेके निमित्त यह शंकरकी शरण होवे, तब इसको सुखकी प्राप्तिहो ॥८१॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां प्रदोषमहिमावर्णनं नामषष्ठोऽध्यायः॥६॥

॥ अथ सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ ॥ सूतजी बोले कि, हे मुनीश्वरो ! इस प्रकार शांडिल्यमुनिके वचनको सुनकर वह विप्रपत्नी हाथ जोड़ प्रणाम कर शांडिल्यमुनिसे प्रदोषकालमें शिवपूजनकी विधिका क्रम पूँछनेलगी ॥ १ ॥ ब्राह्मणीका वचन सुन शांडिल्यमुनि बोले, हे विप्रपत्नि ! महीनेकी दोनों पक्षकी त्रयोदशीको दिनमें निराहार रहे, सूर्य छिपनेसे तीन घड़ी पहिले स्नान कर ॥ २ ॥ सुन्दर श्वेतवस्त्र पहिन नियमपूर्वक सन्ध्या वन्दन और जप करके शिवपूजनका आरम्भ करे ॥ ३ ॥ पूजाके स्थानको देवके आगे भलीप्रकार सुन्दर जलसे लीपकर एक मण्डप बनाय उसको

॥ सूतउवाच ॥ ॥ इत्युक्तामुनिनासाध्वीसाविप्रवनितापुनः ॥ तंप्रणम्याथपप्रच्छशिवपूजाविधेःक्रमम् ॥ १ ॥ शांडिल्यउवाच ॥ ॥
पक्षद्वयेत्रयोदश्यांनिराहारोभवेद्यदा ॥ घटीत्रयादस्तमयात्पूर्वंस्नानंसमाचरेत् ॥ २ ॥ शुक्लांबरधरोधीरोवाग्यतोनियमान्वितः ॥ कृत
संध्याजपविधिःशिवपूजांसमारभेत् ॥ ३ ॥ देवस्यपुरतःसम्यगुपलिप्यनवांभसा ॥ विधायमंडपंरम्यंधौतवस्त्रादिभिर्बुधः ॥ ४ ॥
वितानाद्यैरलंकृत्यफलपुष्पनवांकुरैः ॥ विचित्रपद्ममुद्धृत्यवर्णपंचकसंयुतम् ॥ ५ ॥ तत्रोपविश्यसुशुभेभक्तियुक्तःस्थिरासने ॥ सम्य
क्संपादिताशेषपूजोपकरणःशुचिः ॥ ६ ॥ आगमोक्तेनमंत्रेणपीठमामंत्रयेत्सुधीः ॥ ततःकृत्वात्मशुद्धिंचभूतशुद्ध्यादिकंक्रमात् ॥७॥
प्राणायामत्रयंकुर्याद्बीजवर्णैःसबिंदुकैः ॥ मातृकान्यस्यविधिवद्ध्यात्वातांदेवतांपराम् ॥ ८ ॥

धौतवस्त्र ॥ ४ ॥ वितान, पुष्प, माला, फल, पत्र आदिकोंसे शोभित कर उनमें विचित्र पांच रंगसे अष्टदल कमल लिखे ॥ ५ ॥ वहाँ सुन्दर आसनपर बैठ भक्तिपूर्वक सब पूजाकी सामग्री इकट्ठी कर एकाग्रचित्तसे पूजाका आरम्भ करे ॥ ६ ॥ पहिले शास्त्रोक्तमन्त्रोंसे बुद्धिमान् पुरुष आसनका आमन्त्रण करे, फिर क्रमसे आत्मशुद्धि, भूतशुद्धि आदि कर ॥ ७ ॥ तीन प्राणायाम करे और बिन्दुसहित बीजवर्णोंसे मातृकान्यास करके

विधिपूर्वक परदेवताका ध्यान करे ॥ ८ ॥ मातृकान्यास समाप्त करके फिर शंकरका ध्यान करे, वामभागमें गुरुको प्रणाम कर दक्षिणभागमें गणेश जीको प्रणाम करे ॥ ९ ॥ फिर दोनों कन्धों और दोनों ऊरुओंमें धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्यका न्यास करे, नाभिपृष्ठ और दोनों पार्श्वभागोंमें अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य और अनैश्वर्यका न्यास करे, फिर हृदयमें पीठन्यास करे ॥ १० ॥ फिर आधारशक्तिसे आरम्भकर ज्ञानात्मापर्य्यन्त पूर्वोक्त क्रमसे हृदयकमलमें न्यास करे ॥ ११ ॥ और उसी स्थानमें नव शक्तियोंका ध्यान कर उस मनोहर पीठपर श्रीउमापति महादेवका ध्यान करे, इस प्रकार ध्यान

समाप्यमातृकाभूयोध्यात्वाचैवपरंशिवम् ॥ वामभागेगुरुंनत्वादक्षिणेगणपंनमेत् ॥ ९ ॥ अंसोरुयुग्मेधर्मादिन्यस्यनाभौचपार्श्वयोः ॥
अधर्मादीननंतादीन्हृदिपीठेमनुंन्यसेत् ॥१०॥ आधारशक्तिमारभ्यज्ञानात्मानमनुक्रमात् ॥ उक्तक्रमेणविन्यस्यहृत्पद्मेसाधुभाविते ॥
॥ ११ ॥ नवशक्तिमयेरम्येध्यायेदेवमुमापतिम् ॥ चंद्रकोटिप्रतीकाशंत्रिनेत्रंचंद्रशेखरम् ॥ १२ ॥ आपिंगलजटाजूटं रत्नमौलिविरा
जितम् ॥ नीलग्रीवमुदारांगंनागहारोपशोभितम् ॥१३॥ वरदाभयहस्तंचधारिणंचपरश्वधम् ॥ दधानंनागवलयकेयूरांगदमुद्रिकम्
॥ १४ ॥ व्याघ्रचर्मपरीधानंरत्नसिंहासनेस्थितम् ॥ ध्यात्वातद्वामभागेचचिंतयेद्रिरिकन्यकाम् ॥ १५ ॥

करे, कि, करोड़ चन्द्रमाके समान प्रकाशमान, चन्द्रमाको मस्तकपर धारण कियेहुए ॥ १२ ॥ सब ओरसे पीला है जटाजूट जिनका ऐसे, रत्नजटित मुकुट शीशपर धारण कियेहुए, नीलकंठ, उदारांग, नागहारसे शोभित ॥ १३ ॥ वरद, अभय, परशु और मृग चारों हाथोंमें धारण कियेहुए, नागोंके कंकण और केयूरआदि आभूषण धारण कियेहुए ॥ १४ ॥ व्याघ्रचर्म ओढ़ेहुए, और रत्नसिंहासनपर विराजमान श्रीमहादेवजीका ध्यानकर उनके वाम

भागमें श्रीपार्वतीजीका ध्यान करे ॥ १५ ॥ कि, जपाके पुष्प वा उदय होतेहुए सूर्य्य अथवा बिजलियोंके समूहके समान कान्तिवाली, कोमलांगी मन और नेत्रोंको आनन्द देनेवाली ॥ १६ ॥ चन्द्रकी है मस्तकपर कला जिनके ऐसी चिकने और नीले हैं केश जिनके ऐसी, भौरोंके समूहसे शोभायमान, नीली अलकोंसे विराजित ॥ १७ ॥ मणिकुंडलोंसे शोभित है मुख जिनका ऐसी, सुन्दर केशर और कस्तूरीसे जिनके कपोल भूषित होरहे हैं ॥ १८ ॥ मधुर हास्यसे प्रकाशित होरहा है रक्तवर्णका अधर जिनका ऐसी, नवीनही कुचरूप कम

भास्वज्जपाप्रसूनाभामुदयार्कसमप्रभाम्॥ विद्युत्पुंजनिभांतन्वींमेनानयननंदिनीम् ॥ १६ ॥ बालेंदुशेखरांस्निग्धांनीलकुंचितकुंतलाम् ॥
भृंगसंघातरुचिरांनीलालकविराजिताम् ॥ १७ ॥ मणिकुंडलविद्योतमुखमंडलविभ्रमाम् ॥ नवकुंकुमपंकांककपोलदलदर्पणाम् ॥१८॥
मधुरस्मितविभ्राजदरुणाधरपल्लवाम् ॥ कंबुकंठींशिवामुद्यत्कुचपंकजकुड्मलाम् ॥ १९ ॥ पाशांकुशाभयाभीष्टविलसंतींचतुर्भुजाम् ॥
अनेकरत्नविलसत्कंकणांकितमुद्रिकाम् ॥ २० ॥ वलित्रयेणविलसद्धेमकांचीगुणान्विताम् ॥ रक्तमाल्यांबरधरांदिव्यचंदनचर्चिताम् ॥
॥ २१ ॥ दिक्पालवनितामौलिसन्नतांघ्रिसरोरुहाम् ॥ रत्नसिंहासनारूढांसपराजपरिच्छदाम् ॥ २२ ॥

लकलाकी उदय हुआ है जिनके ऐसी, शंखके समान ग्रीवावाली ॥ १९ ॥ पाश, अंकुश, वर और अभय चारों हाथोंमें धारण कियेहुए, अनेक रत्नोंके कंकण, केयूर, मुद्रिका आदि अनेक आभूषण धारण कियेहुए ॥ २० ॥ तीन वलि जिनके उदरमें हैं, सुवर्णके डोरेसे युक्त रत्नमाला और वस्त्र धारण कियेहुए, दिव्य चन्दनसे चर्चित ॥ २१ ॥ दिक्पालोंकी स्त्रियोंके शीश जिनके चरणकमलोंमें सदा झुके रहते हैं, रत्नसिंहासनपर विरा

जमान और शेषनागसे वेष्टित ॥ २२ ॥ इस प्रकार शंकर और पार्वतीजीका ध्यान कर न्यासके क्रमसे गन्ध पुष्पादिकोंके द्वारा ॥ २३ ॥ पंच
ब्रह्ममन्त्रोंसे प्रोक्त स्थान वा हृदयमें पूजन करे, देहमें पृथक् पुष्पांजलि दे और मूलमंत्रसे हृदयमें तीन बार देवे ॥ २४ ॥ फिर साधक स्वयं शिव
रूप होकर अपने आगे सुवर्ण आदिके सिंहासनपर देवताको बैठावे और मूलमन्त्रसे बाह्य पूजा करे तथा शंकरका ध्यान करे ॥ २५ ॥ पूजाके
आरंभमें पहिले संकल्प कर हाथ जोड़ ऋण, पातक और दौर्भाग्यकी निवृत्तिके निमित्त हृदयमें शंकरका ध्यान करे और कहे कि, हे शंकर ! संपूर्ण

एवंध्यात्वामहादेवंदेवींचगिरिकन्यकाम् ॥ न्यासक्रमेणसंपूज्यदेवंगंधादिभिःक्रमात् ॥ २३ ॥ पंचभिर्ब्रह्मभिः कुर्यात्प्रोक्तस्थानेषुवाहृदि ॥ पृथक्पुष्पांजलिंदेहेमूलेनचहृदित्रिधा ॥ २४ ॥ पुनःस्वयंशिवोभूत्वामूलमंत्रेणसाधकः ॥ ततःसंपूजयेद्देवंबाह्यपीठेपुनःक्रमात् ॥ २५ ॥ संकल्पंप्रवदेत्तत्रपूजारंभेसमाहितः ॥ कृतांजलिपुटोभूत्वाचिंतयेद्धृदिशंकरम् ॥ २६ ॥ ऋणपातकदौर्भाग्यदारिद्र्यविनिवृत्तये ॥ अशेषाघविनाशायप्रसीदममशंकर ॥ २७ ॥ दुःखशोकाग्निसंतप्तंसंसारभयपीडितम् ॥ बहुरोगाकुलंदीनंत्राहिमांवृषवाहन ॥ २८ ॥ आगच्छदेवदेवेशमहादेवाभयंकर ॥ गृहाणसहपार्वत्यातवपूजांमयाकृताम् ॥ २९ ॥ इतिसंकल्प्यविधिवद्बाह्यपूजांसमाचरेत् ॥ गुरुंगणपतिंचैवयजेत्सव्यापसव्ययोः ॥ ३० ॥ क्षेत्रेशमीशकोणेतुयजेद्वास्तोष्पतिंक्रमात् ॥ वाग्देवींचयजेत्तत्रततःकात्यायनींयजेत् ॥ ३१ ॥

पाप नष्ट करके मेरे ऊपर प्रसन्न होओ ॥२६॥॥२७॥ हे वृषवाहन ! दुःख और शोककी अग्निसे सन्तप्त, संसारके भयसे पीडित, अनेक रोगोंसे व्याप्त,
और दीन हुए मेरी रक्षा करो ॥ २८ ॥ हे देवदेव ! अभयंकर महादेव ! इस आसनपर आओ, और मेरी की हुई पूजाको पार्वतीसमेत ग्रहण करो
॥ २९ ॥ इसप्रकार संकल्प करके बाह्य पूजाका आरम्भ करे और गुरु, गणपतिको सव्यापसव्यमें यजन करे ॥ ३० ॥ ईशान कोणमें क्षेत्रपालको

पूजे, फिर क्रमसे वास्तोष्पति और वाग्देवीकी पूजा कर कात्यायनीकी पूजा करे ॥ ३१ ॥ तदनन्तर धर्म, ज्ञान, ऐश्वर्य और वैराग्यके अन्तमें नमः
यह पद लगाकर ईशानादिकोणसे पीठके चारों पादोंमें पूजा करे ॥ ३२ ॥ इसीप्रकार अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य और अनैश्वर्यकी पीठके अंगोंमें पूजा
करे, पीठके बीचमें अनन्तकी पूजा कर ॥ ३३ ॥ सत्त्वआदि तीनों गुण और उनको सिंहासनमें स्थापन करे, उसके ऊर्द्ध्वभागमें माया, लक्ष्मी और
शिवको साथ ॥ ३४ ॥ स्थापन करे उसमें कमलको पूज तीनों मंडलोंमें पत्र केशरसे व्याप्तकर मूल अक्षरोंसे क्रमपूर्वक ॥ ३५ ॥ आदरसे मंड

धर्मज्ञानंचवैराग्यमैश्वर्यंचनमोंतकैः ॥ स्वरैरीशादिकोणेषुपीठपादाननुक्रमात् ॥ ३२ ॥ आभ्यांबिंदुविसर्गाभ्यामधर्मादीन्प्रपूजयेत् ॥
सत्त्वरूपैश्चतुर्दिक्षुमध्येऽनंतंसतारकम् ॥ ३३ ॥ सत्त्वादींस्त्रिगुणांस्तंतुरूपान्पीठेषुविन्यसेत् ॥ अतऊर्ध्वच्छदेमायांसहलक्ष्म्याशिवेनच ॥
॥ ३४ ॥ तदंतेचांबुजंभूयः सकलंमंडलत्रयम् ॥ पत्रकेसरकिंजल्कव्याप्तंतत्राक्षरैः क्रमात् ॥ ३५ ॥ पद्मत्रयंतथाभ्यर्च्यमध्येमंडप
मादरात् ॥ वामांज्येष्ठांचरौद्रींचभागाद्यैर्दिक्षुपूजयेत् ॥ ३६ ॥ वामाद्यानवशक्तीश्चनवस्वरयुतायजेत् ॥ हृदिबीजत्रयाद्येनपीठमंत्रेणचा
र्चयेत् ॥ ३७ ॥ आवृत्तैःप्रथमांगैश्चपंचभिर्मूर्त्तिशक्तिभिः ॥ त्रिशक्तिमूर्त्तिभिश्चान्यैर्निधिद्वयसमन्वितैः ॥ ३८ ॥ अनंताद्यैःपरीताश्चमा
तृभिश्चवृषादिभिः ॥ सिद्धिभिश्चाणिमाद्याभिरिंद्राद्यैश्चसहायुधैः ॥ ३९ ॥

पके बीचमें तीनों कमलोंकी अर्चना करे यह अग्नि सूर्य और सोमके मंडलोंकी अर्चना हुई । फिर कमलके मध्यमें वामा, ज्येष्ठा, रौद्री आदि पीठ
शक्तियोंको पूजै ॥ ३६ ॥ वामा आदि नव शक्तियोंकी नव स्वरोंसे अर्चना करे, फिर आदिके तीन हृदयबीज और पीठमन्त्रसे पूजन करे
॥ ३७ ॥ प्रथमांग आवृत्तोंसे पांच शक्ति मूर्तियोंसे, त्रिशक्तिमूर्त्तियोंसे, तथा अन्य दो निधियोंसे युक्त ॥ ३८ ॥ अनन्त आदिकोंसे, मातृ

आदि और वृषादिकोंसे, अणिमा आदि अष्टसिद्धियोंमे आयुधसहित इन्द्रादिकोंसे ॥ ३९ ॥ वृषभ, क्षेत्र, चंडेश, दुर्गा, स्कन्द, नन्दन, गणेश, सैन्यप इनको अपने २ लक्षण सम्पन्नकर स्थापित करे ॥ ४० ॥ अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, ईशित्व, वशित्व, प्राप्ति और प्राकाम्य ॥ ४१ ॥ यह ऐश्वर्यकी देनेवाली और तेजोरूप कथन की है, पहिले हल्लेखादिके क्रमपूर्वक पंचब्रह्म ॥ ४२ ॥ और उमा इन्द्रादि अंगोंसे मुनियोंने पूजा कही है, उमा और चंडेश्वर आदिको उत्तरसे आदिलेकर पूजे ॥ ४३ ॥ इसप्रकार आवरणोंसे युक्त तेजोरूप सदाशिवको पार्वतीसमेत उपचारोंसे पूजे

वृषभक्षेत्रचंडेशदुर्गाश्चस्कंदनंदिनौ ॥ गणेशःसैन्यपश्चैवस्वस्वलक्षणलक्षिताः ॥४०॥ अणिमामहिमाचैवगरिमालघिमातथा ॥ ईशित्वंचवशित्वंचप्राप्तिःप्राकाम्यमेवच ॥४१॥ अष्टैश्वर्याणिचोक्तानितेजोरूपाणिकेवलम् ॥ पंचभिर्ब्रह्मभिःपूर्वंहल्लेखाद्यादिभिःक्रमात् ॥४२॥ अंगैरुमाद्यैरिंद्राद्यैःपूजोक्तामुनिभिस्तुतैः ॥ उमाचंडेश्वरादींश्चपूजयेदुत्तरादितः ॥ ४३ ॥ एवमावरणैर्युक्तंतेजोरूपंसदाशिवम् ॥ उमयासहितंदेवमुपचारैःप्रपूजयेत् ॥४४॥ सुप्रतिष्ठितशंखस्यतीर्थैःपंचामृतैरपि ॥ अभिषिच्यमहादेवंरुद्रसूक्तैःसमाहितः ॥४५॥ कल्पयेद्विविधैर्मंत्रैरासनाद्युपचारकान् ॥ आसनंकल्पयेद्धेमंदिव्यवस्त्रसमन्वितम् ॥४६॥ अर्घ्यमष्टगुणोपेतंपाद्यंशुद्धोदकेनच ॥ तेनैवाचमनंदद्यान्मधुपर्कमधूत्तरम् ॥४७॥ पुनराचमनंदत्त्वास्नानंमंत्रैः प्रकल्पयेत् ॥ उपवीतंतथावासोभूषणानिनिवेदयेत् ॥ ४८ ॥

॥ ४४ ॥ सुप्रतिष्ठित शंखको तीर्थ और पंचामृतोसे स्नान करावे, और एकाग्रचित्तसे रुद्रसूक्तोंद्वारा शंकरका अभिषेचन करके ॥ ४५ ॥ अनेक मन्त्रोंसे आसन और उपचारोंकी कल्पना करे, दिव्यवस्त्रयुक्त सुवर्णका आसन विधान करे ॥ ४६ ॥ अष्टगुणयुक्त अर्घ्य और शुद्धजलसे पाद्य दे, उसी जलसे आचमन करावे, मधुपर्क दे ॥ ४७ ॥ फिर आचमन कराकर वैदिकमंत्रोंसे स्नान करावे, यज्ञोपवीत, वस्त्र और आभूषण निवेदन करे॥ ४८॥

अष्टांगयुक्त पवित्रगन्ध निवेदन करे, फिर बिल्वपत्र, मंदार, कह्लार, कर्णिका, कमल ॥ ४९ ॥ धतूरा, द्रोण, मल्लिका, कुशा, अपा
मार्ग, तुलसी, माधवी, चम्पक आदि ॥ ५० ॥ बृहती, करवीर आदिके सुन्दर पुष्पोंसे वा समयपर साधकको जो मिलें उनसे और सुगंधियुक्त
मालाओंसे शिवपार्वतीकी पूजा करे॥५१॥ सुगन्धियुक्त और काले अगरसे उत्पन्न धूपदे और दीप देवै, फिर पायस॥५२॥ मोदक, अपूप, दुग्ध और दही
आदि शर्करा और गुड मधुयुक्त दही और जल निवेदन करे ॥ ५३ ॥ उसी हविसे मन्त्रों द्वारा अग्निमें आहुति दे, और गुरुके वाक्यमें विश्वास

गंधमष्टांगसंयुक्तंसुपूतांविनिवेदयेत् ॥ ततश्चबिल्वमंदारकह्लारसरसीरुहैः ॥४९॥ धत्तूरकंकर्णिकारंशणपुष्पंचमल्लिकाम् ॥ कुशापामार्ग
तुलसीमाधवीचंपकादिकम् ॥ ५० ॥ बृहतीकरवीराणियथालब्धानिसाधकः ॥ निवेदयेत्सुगंधीनिमाल्यानिविविधानिच ॥५१॥ धूपंका
लागरूत्पन्नंदीपंचविमलंशुभम् ॥ अथपायसनैवेद्यंसघृतंसोपदंशकम् ॥ ५२ ॥ मोदकापूपसंयुक्तंशर्कराग्गुडसंयुतम् ॥ मधुनाक्तंदधियुतं
जलपानसमान्वितम् ॥ ५३ ॥ तेनैवहविषावह्नौजुहुयान्मंत्रभाविते ॥ आगमोक्तेनविधिनागुरुवाक्यनियंत्रितः ॥५४॥ नैवेद्यंशंभवेभूयो
दत्त्वातांबूलमुत्तमम् ॥ धूपंनीराजनंरम्यंछत्रंदर्पणमुत्तमम् ॥ ५५ ॥ समर्पयित्वाविधिवन्मंत्रैर्वैदिकतांत्रिकैः ॥ यद्यशक्तःस्वयंनिः
स्वोयथाविभवमर्चयेत् ॥ ५६ ॥ भक्त्यादत्तेनगौरीशःपुष्पमात्रेणतुष्यति ॥ अथांगभूतान्सकलान्गणेशादीन्प्रपूजयेत् ॥ ५७ ॥

करके शास्त्रोक्त विधिसे ॥ ५४ ॥ शंकरके निमित्त नैवेद्य निवेदन करके सुन्दर ताम्बूल निवेदन करे, फिर धूप नीराजन करे और सुंदर छत्र दर्पण
दे॥ ५५ ॥ वैदिक तांत्रिक मन्त्रोंसे विधिपूर्वक यह सब समर्पण करे, इसप्रकारकी पूजा करनेमें असमर्थ हो, और निर्धन हो, तो अपनी शक्तिके अनुसार
पुष्प चंदन आदिसेही शंकर पार्वतीका पूजन करे॥५६॥ कारण कि, भक्तिपूर्वक पुष्पमात्रके निवेदन करनेसे ही पार्वतीपति महादेव प्रसन्न होजाते हैं, फिर अंग

देव गणेशआदिका पूजन करे ॥ ५७ ॥ और अनेक स्तोत्रोंसे स्तुति कर बुद्धिमान् पुरुष साष्टांग प्रणाम करे, तदनन्तर नवचण्डेश्वर आदि समेत शंकरकी प्रदक्षिणा करे ॥ ५८ ॥ और विधिपूर्वक पूजा समाप्त करके इस स्तोत्रसे गिरिजापति शंकरकी स्तुति करे । जय देव जगन्नाथ ! जय शंकर शाश्वत ! ॥ ५९ ॥ हे सर्वसुराध्यक्ष ! हे सर्वदेवोंसे पूजित ! तुम्हारी जय हो, सर्वगुणातीत ! हे सर्व वर देनेवाले ! तुम्हारी जय हो ॥ ६० ॥ जय नित्य निराधार ! जय विश्वंभर ! जय अव्यय ! जय विश्वैकवेद्येश ! हे सर्पोंका भूषण धारणकरनेवाले ! तुम्हारी जय हो ॥ ६१ ॥

स्तवैर्नानाविधैःस्तुत्वासाष्टांगंप्रणमेद्बुधः ॥ ततःप्रदक्षिणीकृत्यनवचंडेश्वरादिकान् ॥ ५८ ॥ पूजांसमर्प्यविधिवत्प्रार्थयेद्गिरिजापतिम् ॥ जयदेवजगन्नाथजयशंकरशाश्वत ॥ ५९ ॥ जयसर्वसुराध्यक्षजयसर्वसुरार्चित ॥ जयसर्वगुणातीतजयसर्ववरप्रद ॥ ६० ॥ जयनित्यनिराधारजयविश्वंभराव्यय ॥ जयविश्वैकवेद्येशजयनागेंद्रभूषण ॥ ६१ ॥ जयगौरीपतेशंभोजयचंद्रार्धशेखर ॥ जयकोट्यर्कसंकाश जयानंतगुणाश्रय ॥ ६२ ॥ जयरुद्रविरूपाक्षजयाचिंत्यनिरंजन ॥ जयदुस्तरसंसारसागरोत्तारणप्रभो ॥ ६३ ॥ प्रसीदमेमहादेवसंसारार्त्तस्यखिद्यतः ॥ सर्वपापभयंहृत्वारक्षमांपरमेश्वर ॥६४॥ महादारिद्र्यमग्नस्यमहापापहतस्यच ॥ महाशोकविनष्टस्यमहारोगातुरस्यच ६५

जय गौरीपते ! जय शंभो ! जय चंद्रार्धशेखर ! हे करोड सूर्य्यके तुल्य कान्तिवाले ! हे अनन्तगुणाश्रय ! तुम्हारी जय हो ॥ ६२ ॥ जय रुद्र ! विरूपाक्ष ! जय अचिन्त्य निरंजन ! हे संसारसागरसे उद्धारकरनेमें समर्थ शंकर ! तुम्हारी जय हो ॥ ६३ ॥ हे महादेव ! संसारसे आर्त्त और खेदित मेरे ऊपर प्रसन्न होओ, हे परमेश्वर ! संपूर्ण पापोंके भयको दूर करके मेरी रक्षा करो ॥ ६४ ॥ महादारिद्र्ययुक्त, महापापोंसे हत महाशो

कसे विनष्ट, महारोगोंसे पीडित ॥ ६५ ॥ ऋणभारसे झुकेहुए, अपनेकर्मोंसे दह्यमान और ग्रहोंसे पीडित मेरेऊपर प्रसन्न होओ ॥ ६६ ॥ पूजाके उपरान्त दारिद्री पुरुष इस प्रकार शंकरकी प्रार्थना करे, चाहे धनी हो वा राजा, सबको शंकरसे प्रार्थना करनीचाहिये ॥ ६७ ॥ कि, मेरी दीर्घायु हो, सदा निरोगी रहूँ, मेरे खजानेमें रुपया बढ़े, बल बढ़े, मेरे नित्य आनन्द रहे ॥ ६८ ॥ हे शंकर ! तुम्हारे प्रसादसे मेरे शत्रु नष्ट होवें, मेरी प्रजा प्रसन्न रहें, मेरे राज्यमें चोर न हों, सब प्रजा आपत्तिरहित होवें ॥ ६९ ॥ मेरे राज्यमें दुर्भिक्ष और शत्रुका भय न हो, सर्व अन्नोंकी वृद्धि हो,

ऋणभारपरीतस्यदह्यमानस्यकर्मभिः ॥ ग्रहैःप्रपीड्यमानस्यप्रसीदममशंकर ॥ ६६ ॥ दरिद्रःप्रार्थयेदेवंपूजांतेगिरिजापतिम् ॥ अर्थाढ्यो वापिराजावाप्रार्थयेद्देवमीश्वरम् ॥ ६७ ॥ दीर्घमायुःसदारोग्यंकोशवृद्धिर्बलोन्नतिः ॥ ममास्तुनित्यमानंदःप्रसादात्तवशंकर ॥ ६८ ॥ शत्रवःसंक्षयंयांतुप्रसीदंतुममप्रजाः ॥ नश्यंतुदस्यवोराष्ट्रेजनाःसंतुनिरापदः ॥ ६९ ॥ दुर्भिक्षमरिसंतापःशमंयातुमहीतले ॥ सर्वसस्य समृद्धिश्चभूयात्सुखमयादिशः ॥ ७० ॥ एवमाराधयेद्देवंप्रदोषेगिरिजापतिम् ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्दक्षिणाभिश्चतोषयेत् ॥ ७१ ॥ सर्वपापक्षयकरीसर्वदारिद्र्यनाशिनी ॥ शिवपूजामयाख्यातासर्वाभीष्टवरप्रदा ॥ ७२ ॥ महापातकसंघातमधिकंचोपपातकम् ॥ शिवद्रव्या पहरणादन्यत्सर्वंनिवारयेत् ॥ ७३ ॥ ब्रह्महत्यादिपापानांपुराणेषुस्मृतिष्वपि ॥ प्रायश्चित्तानिदृष्टानिनशिवद्रव्यहारिणाम् ॥ ७४ ॥

सब दिशाओंमें मंगल होवे ॥ ७० ॥ इस प्रकार प्रदोषके समय शंकरकी आराधना करे, फिर ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उनको दक्षिणादि देकर प्रसन्न करे ॥ ७१ ॥ संपूर्ण पापोंका नाश करनेवाली, सब दारिद्रको नष्ट करनेवाली, और संपूर्ण मनोवांछित वर देनेवाली शंकरकी पूजा मैंने तुमसे कही ॥ ७२ ॥ शिवद्रव्यहरणके पापको छोड़ और सब महापातक, उपपातक शिवपूजन करनेसे नष्ट होजाते हैं ॥ ७३ ॥ ब्रह्महत्या

आदि पापोंके प्रायश्चित्त पुराणों और स्मृतियोंमें देखे हैं पर शिवजीका द्रव्य हरणकरनेवालोंका कहीं प्रायश्चित्त नहीं देखा ॥ ७४ ॥ बहुत कहनेसे क्या है मैं आधे श्लोकमें कह देताहूं कि, सौ ब्रह्महत्याओंको भी शिवपूजा निवारण करदेती है॥ ७५॥ इसप्रकार कहकर फिर शांडिल्यमुनि बोले कि, हे ब्राह्मणपत्नि ! यह प्रदोषमें शिवपूजनका विधान मैने तुमसे कथन किया, यह सब प्राणियोंको छिपाना चाहिये इसमें संदेह नही ॥ ७६ ॥ इन बालकोंसेभी इसी प्रकार पूजन कर अबसे एक वर्षके उपरान्त बड़ी सिद्धि प्राप्त होगी ॥ ७७ ॥ इस प्रकार शांडिल्यमुनिके वचनको सुनकर उस विप्र

बहुनात्रकिमुक्तेनश्लोकार्द्धेनब्रवीम्यहम् ॥ ब्रह्महत्याशतंवापिशिवपूजाविनाशयेत् ॥ ७५ ॥ मयाकथितमेतत्तेप्रदोषेशिवपूजनम् ॥ रहस्यंसर्वजंतूनामत्रनास्त्येवसंशयः ॥ ७६ ॥ एताभ्यामपिबालाभ्यामेवंपूजाविधीयताम् ॥ अतःसंवत्सरादेवपरांसिद्धिमवाप्स्यथ ॥ ॥ ७७ ॥ इतिशांडिल्यवचनमाकर्ण्यद्विजभामिनी ॥ ताभ्यांतुसहबालाभ्यांप्रणनाममुनेःपदम् ॥ ७८ ॥ ॥ विप्रस्त्र्युवाच ॥ ॥ अहमद्य कृतार्थास्मितवदर्शनमात्रतः ॥ एतौकुमारौभगवंस्त्वामेवशरणंगतौ ॥७९॥ एषमेतनयोब्रह्मञ्छुचिव्रतइतीरितः ॥ एषराजसुतोनाम्ना धर्मगुप्तःकृतोमया ॥८०॥ एतावहंचभगवन्भवच्चरणकिंकराः ॥ समुद्धरास्मिन्पतितान्घोरेदारिद्र्यसागरे ॥ ८१ ॥ इतिप्रपन्नांशरणं द्विजांगनामाश्वास्यवाक्यैरमृतोपमानैः ॥ उपादिदेशाथतयोःकुमारयोर्मुनिःशिवाराधनमंत्रविद्याम् ॥ ८२ ॥

पत्नीने बालकोसमेत मुनिके चरणोंको प्रणाम किया ॥ ७८ ॥ और बोली, तुम्हारे दर्शनमात्रसे आज मैं कृतार्थ हुई, यह दोनों बालक भी तुम्हारी शरण हैं ॥ ७९ ॥ हे ब्रह्मन् ! यह जो मेरा पुत्र है इसका नाम शुचिव्रत और इस राजपुत्रका धर्मगुप्त नाम मैने रक्खा है ॥ ८० ॥ हे भगवन् ! यह बालक और मैं आपके चरणसेवक हैं इस घोर दारिद्र्यरूप सागरमें गिरेहुए हमारा उद्धार करो ॥ ८१ ॥ इस प्रकार शरणमें आईहुई उस

विप्रपत्नीको अमृतके तुल्य वचनोंसे समझाकर शिवाराधनरूप मंत्रविद्याका उन दोनों बालकोंको उपदेश दिया ॥ ८२ ॥ वे तीनों शांडिल्यमुनिसे
उपदेश लेकर और उनको प्रणाम करके शिवमंदिरसे अपने स्थानको गये ॥ ८३ ॥ उस दिनसे वे दोनों बालक मुनिके उपदेशसे प्रदोषमें पार्वतीपति
महादेवकी पूजा करनेलगे ॥ ८४ ॥ इस प्रकार शंकरकी पूजा करतेहुए उन दोनों बालकोंको चार महीने सुखसे बीते ॥ ८५ ॥ एक समय वह
ब्राह्मणपुत्र राजपुत्रके विना स्नान करनेको नदीके किनारे गया और अनेक प्रकारकी लीला करनेलगा ॥ ८६ ॥ उस बालकने लीला करते

अथोपदिष्टौमुनिनाकुमारौब्राह्मणीचसा ॥ तंप्रणम्यसमामंत्र्यजग्मुस्तेशिवमंदिरात् ॥ ८३ ॥ ततःप्रभृतितौबालौमुनिवर्योपदेशतः ॥
प्रदोषेपार्वतीशस्यपूजांचक्रतुरंजसा ॥ ८४ ॥ एवंपूजयतोर्देवंद्विजराजकुमारयोः ॥ सुखेनैवव्यतीयायतयोर्मासचतुष्टयम् ॥ ८५ ॥
कदाचिद्राजपुत्रेणविनासौद्विजनंदनः ॥ स्नातुंगतोनदीतीरेचचारबहुलीलया ॥ ८६ ॥ तत्रनिर्जरनिर्घातनिर्भिन्नवप्रकुट्टिमे ॥ निधानकल
शंस्थूलंप्रस्फुरंतंददर्शह ॥ ८७ ॥ तंदृष्ट्वासहसागत्यहर्षकौतुकविह्वलः ॥ दैवोपपन्नंमन्वानोगृहीत्वाशिरसाययौ ॥ ८८ ॥ ससंभ्रमंसमानी
यनिधायकलशंबलात् ॥ निधायभवनस्यांतिमातरंसमभाषत ॥ ८९ ॥ मातर्मातरिमंपश्यप्रसादंगिरिजापतेः ॥ निधानंकुंभरूपेणदर्शितं
करुणात्मना ॥ ९० ॥

करते एक स्थानमें कि, जहाँ जलके वेगसे वहाँकी मिट्टी दूर होगई है, एक चमकताहुआ निधिका कलश देखा ॥ ८७ ॥ उसको देख हर्ष और
कौतुकसे विह्वल होगया और विचारा कि, शंकरकी पूजाका यह फल है, इस प्रकार शीघ्र ही उस कलशको मस्तकपर रख घर आया ॥ ८८ ॥ आश्चर्य
पूर्वक ला और शिरसे बलपूर्वक उतारा तथा घरके भीतर रखकर मातासे बोला ॥ ८९ ॥ हे मातः ! इस शिवजीके प्रसादको देखो, जो कृपाकर

शंकरने निधिका कलश मुझे दिखाया है ॥ ९० ॥ आश्चर्यपूर्वक उस ब्राह्मणीने राजपुत्रको बुलाकर शिवपूजनको अधिक माना और प्रसन्नतापूर्वक अपने पुत्रसे बोली ॥ ९१ ॥ कि, हे पुत्रो ! इस कलशकी निधिको मेरी आज्ञासे आधा आधा बाँटलो ॥ ९२ ॥ इस प्रकार माताका वचन सुन ब्राह्मणपुत्र प्रसन्न हुआ और राजपुत्र शंकरार्चनमें विश्वासकरके मातासे बोला ॥ ९३ ॥ हे मातः ! तुम्हारे पुत्रके पुण्यसे यह निधि मिली है, मैं इस

अथसाविस्मितासाध्वीसमाहूयनृपात्मजम् ॥ स्वपुत्रंप्रतिनंद्याहमानयंतीशिवार्चनम् ॥ ९१ ॥ शृणुतंमिवचःपुत्रौनिधानकलशीमिमाम् ॥ समंविभज्यगृह्णीतंममशासनगौरवात् ॥ ९२ ॥ इतिमातुर्वचःश्रुत्वातुतोपद्विजनंदनः ॥ प्रत्याहराजपुत्रस्तांविस्रब्धःशंकरार्चने ॥ ९३ ॥ मातस्तवसुतस्यैवसुकृतेनसमागतम् ॥ नाहंग्रहीतुमिच्छामिविभक्तंधनसंचयम् ॥ ९४ ॥ आत्मनःसुकृताल्लब्धंस्वयमेवभुनक्त्वसौ ॥ सएवभगवानीशःकरिष्यतिकृपांमयि ॥ ९५ ॥ एवमर्चयतोःशंभुंभूयोपिपरयामुदा ॥ संवत्सरोव्यतीयायतस्मिन्नेवगृहेतयोः ॥ ९६ ॥ अथैकदाराजसूनुःसहतेनाद्विजन्मना ॥ वसंतसमयेप्राप्तेविजहारवनांतरे ॥ ९७ ॥ अथदूरंगतौक्वापिवनेद्विजनृपात्मजौ ॥ गंधर्वकन्याःक्रीडंतीःशतशस्तावपश्यताम् ॥ ९८ ॥

धनको बाँटकरलेना नही चाहता ॥ ९४ ॥ अपने सुकृतसे प्राप्त हुए धनको यह स्वयं भोगै, वही शंकर मेरेऊपर भी कृपा करेगे ॥ ९५ ॥ इसप्रकार अर्चना करतेहुए उन दोनोंको उस घरमें एक वर्ष बीता ॥ ९६ ॥ एक समय वह राजपुत्र ब्राह्मणपुत्रके साथ वसंत ऋतुके समय वनमें विहार करनेलगा ॥ ९७ ॥ वे दोनों (राजपुत्र और ब्राह्मणपुत्र) किसी वनमें विहार करते २ दूर निकलगये, वहाँ क्रीड़ा करतीहुई

सैकड़ों कन्याओंको देखा ॥ ९८ ॥ मनोहरशरीरवाली उन कन्याओंको क्रीडा करते देख वह ब्राह्मणपुत्र राजपुत्रसे बोला ॥ ९९ ॥ इससे आगे मत
चलो आगे स्त्रियें क्रीड़ा कररही हैं, उज्वल आशयवाले विद्वज्जन स्त्रीकी समीपताको त्यागते हैं ॥ १०० ॥ कारण कि, स्त्रियें बडेयौवनकेगर्वसे मत्त
होती हैं, और मनुष्यको अपनी मीठी वाणीसे वशमें करलेती हैं ॥ १०१ ॥ इसलिये अपने धर्ममें प्रीति रखनेवाला विद्वान् ब्राह्मण और विशेषकरके
ब्रह्मचारी इनका संग और इनके साथ भाषण कदापि न करे ॥ १०२ ॥ अतएव मैं मृगके समान नेत्रवाली इन स्त्रियोंके क्रीडास्थानमें नहीं

ताः सर्वाश्चारुसर्वाङ्ग्योविहरंत्योमनोहरम् ॥ दृष्ट्वाद्विजात्मजोदूरादुवाचनृपनंदनम् ॥ ९९ ॥ इतःगुरोनगंतव्यंविहरंत्यग्रतःस्त्रियः ॥ स्त्रीस
न्निधानंविबुधास्त्यजंतिविमलाशयाः ॥ १०० ॥ एताःकैतवकारिण्योघनयौवनदुर्मदाः ॥ मोहयंत्योजनंदृष्ट्वावाचानुनयकोविदाः ॥ १ ॥
अतः पारित्यजेत्स्त्रीणांसन्निधिंसहभाषणम् ॥ द्विजधर्मरतोविद्वन्ब्रह्मचारीविशेषतः ॥ २ ॥ अतोहंनोत्सहेगंतुंक्रीडास्थानंमृगीदृशाम् ॥ इ
त्युक्त्वाद्विजपुत्रस्तुनिवृत्तोदूरतःस्थितः ॥ ३ ॥ अथासौराजपुत्रस्तुकौतुकाविष्टमानसः ॥ तासांविहारपदवीमेकएवाभयोययौ ॥ ४ ॥
तत्रगंधर्वकन्यानांमध्येत्वेकावरानना ॥ दृष्ट्वायांतंराजपुत्रंचिंतयामासचेतसा ॥ ५ ॥ अहोकोयमुदारांगोयुवासर्वांगसुन्दरः ॥ मत्तमातं
गगमनोलावण्यामृतवारिधिः ॥ ६ ॥ लीलालोलविशालाक्षोमधुरस्मितपेशलः ॥ मदनोपमरूपश्रीःसुकुमारांगलक्षणः ॥ ७ ॥

जानाचाहता यह कह वह ब्राह्मणपुत्र तो वहाँसे लौटकर दूर स्थित होगया ॥ १०३ ॥ और राजपुत्र अकेला ही निर्भय हो कौतुकसे उन गन्धर्वकन्या
ओंके विहार स्थानपर गया ॥ १०४ ॥ वहाँ उन कन्याओंमें एक गन्धर्वकन्या उस राजपुत्रको देखकर मनमें विचारनेलगी ॥ १०५ ॥ कि, यह
सर्वांगसुन्दर और युवा कौन पुरुष मस्त हाथीके समान लावण्यरूपी अमृतका समुद्र इधरको आताहै ॥ १०६ ॥ लीलासे चलायमान हैं विशाल नेत्र

जिसके, मधुर हास्यसे उज्वल, साक्षात् कामदेवके समान कान्तिमान् अथवा सुकुमारांग लक्षणसंपन्न ॥ १०७ ॥ इस प्रकारके राजपुत्रको दूरसे देखकर
आश्चर्य करनेलगी और सब सखियोंको देख उनसे बोली ॥ १०८ ॥ 'कि, हे सखियों ! यहाँसे थोड़ी दूर एक विचित्र वन चम्पक, अशोक, बकुल,
पुन्नाग, आदि अनेक उत्तमवृक्षोंसे शोभायमान है ॥ १०९ ॥ तुम सब वहाँ जाओ और फूल बीनकर फिर यहाँ आना, तबतक मैं यहाँही स्थित हूँ
॥ ११० ॥ इस आज्ञाको मानकर सब सखियें दूसरे वनमें चलीगईं; और वह कन्या वहाँ स्थित होकर राजाके पुत्रको देखनेलगी ॥ १११ ॥

इत्याश्चर्ययुताबालादूराद्दृष्ट्वानृपात्मजम् ॥ सर्वाःसखीःसमालोक्यवचनंचेदमब्रवीत् ॥ ८ ॥ इतोविदूरेहेसख्योवनमस्त्येकमुत्तमम् ॥
विचित्रचंपकाशोकपुन्नागबकुलैर्युतम् ॥ ९ ॥ तत्रगत्वावनंसर्वाःसंचीयकुसुमोत्करम् ॥ भवत्यःपुनरायांतुतावत्तिष्ठाम्यहंत्विह ॥ १० ॥
इत्यादिष्टःसखीवर्गोजगामाविपिनांतरम् ॥ सापिगंधर्वजातस्थौन्यस्तदृष्टिर्नृपात्मजे ॥ ११ ॥ तांसमालोक्यतन्वंगींनवयौवनशालिनीम् ॥
बालांस्वरूपसंपत्त्यापरिभूततिलोत्तमाम् ॥ १२ ॥ राजपुत्रःसमागम्यकौतुकात्फुल्ललोचनः ॥ अवापदैवयोगेनमदनस्यशरव्यथाम् ॥
॥ १३ ॥ गंधर्वतनयासापिप्राप्तायनृपसूनवे ॥ उत्थायतरसातस्मैप्रददौपल्लवासनम् ॥ १४ ॥ कृतोपचारमासीनंतमासाद्यसुमध्यमा ॥
पप्रच्छतद्रूपगुणैर्ध्वस्तधैर्याकुलेंद्रिया ॥ १५ ॥

कोमल अंगवाली, नवीन यौवनवती, और अपने स्वरूपसे तिरस्कार करदिया है तिलोत्तमा आदि अप्सराओंका जिसने ऐसी उस गन्धर्व कन्याको देख
॥ ११२ ॥ कौतुकसे प्रफुल्ल होगये है नेत्र जिसके ऐसा वह राजपुत्र उसके निकट आया और कामदेवके वशीभूत होगया ॥ ११३ ॥ उस गन्ध
र्वकन्याने प्राप्तहुए राजपुत्रके निमित्त शीघ्रतापूर्वक उठकर पत्तोंका आसन दिया ॥ ११४ ॥ उसके रूप और गुणोंसे धैर्यके नष्ट होजानेसे व्याकुल

होगई हैं इन्द्रियें जिसकी ऐसी वह पतली कमरवाली गन्धर्वकन्या निकट आकर उपचारके उपरान्त बैठेहुए राजपुत्रसे पूँछने लगी ॥ ११५ ॥ कि,
हे कमलपत्राक्ष ! तुम कौन हो ? और किस देशसे यहाँ आये हो ? किसके पुत्र हो ? इसप्रकार प्रेमपूर्वक गन्धर्वकन्याके पुँछनेपर राजपुत्रने सब निवे
दन किया ॥ ११६ ॥ कि, विदर्भदेशके राजाका पुत्र, माता पिता हीन हूँ, शत्रुओंने हमारा सब राज्य हरण करलिया, अब हम दूसरेके राज्यमें
स्थित हैं ॥ ११७ ॥ सब निवेदन करके वह राजपुत्र उस (गन्धर्वकन्या) से पूँछने लगा, कि, हे वामोरु ! तुम कौन हो ? यहाँ तुम्हारा क्या

कस्त्वंकमलपत्राक्षकस्माद्देशादिहागतः ॥ कस्यपुत्रइतिप्रेम्णापृष्टःसर्वंन्यवेदयत् ॥ १६ ॥ विदर्भराजतनयंविध्वस्तपितृमातृकम् ॥
शत्रुभिश्चहृतस्थानमात्मानंपरराष्ट्रगम् ॥ १७ ॥ सर्वमावेद्यभूपस्तांपप्रच्छनृपनंदनः ॥ कात्वंवामोरुकिंचात्रकार्यंतेकस्यचात्मजा ॥
॥ १८ ॥ किमवध्यायसिहृदाकिंवावक्तुमिहेच्छसि ॥ इत्युक्तासापुनःप्राहशृणुराजेंद्रसत्तम ॥ १९ ॥ आस्तेकोद्रविकोनामगं
धर्वाणांकुलाग्रणीः ॥ तस्याहमस्मितनयानाम्नाचांशुमतीस्मृता ॥ १२० ॥ त्वामायांतंविलोक्याहंत्वत्संभाषणलालसा ॥ त्यक्त्वा
सखीजनंसर्वमेकैवास्मिमहामते ॥ २१ ॥ सर्वसंगीतविद्यासुनमत्तोन्यास्तिकाचन ॥ ममयोगेनतुष्यंतिसर्वाअपिसुरस्त्रियः ॥ २२ ॥

कार्य है ? और किसकी तुम कन्या हो ? ॥ ११८ ॥ हृदयमें क्या ध्यान करती हो ? क्या कुछ कहनेकी इच्छा है ? इसप्रकार राजपुत्रके कहनेपर
वह फिर बोली, कि, हे राजेन्द्र ! सुनो ॥ ११९ ॥ कोद्रविकनाम एक गन्धर्वोंके कुलमें गन्धर्व है, उसकी मैं कन्या हूँ और नाम मेरा अंशुमती है
॥ १२० ॥ तुम्हें आते देख तुमसे भाषण करनेकी इच्छासे हे महामते ! सब सखियोंको छोड़ अकेली रही हूँ ॥ १२१ ॥ सब संगीत विद्यामें मेरे

समान दूसरा कोई नहीं है, मेरे गानसे सब देवांगना सन्तुष्ट होती हैं ॥ १२२ ॥ सब कला जाननेवाली मैं सबके हृदयका अभिप्राय जानती हूँ, तुम्हारे मनोरथकोभी जानती हूँ कि, तुम्हारा मन मुझमें आसक्त हुआ है ॥ १२३ ॥ और दैवयोगसे मेरा चित्तभी आपपर आसक्त होरहा है, मेरी और तुम्हारी प्रीति परमात्माने की है, इसलिये हमारी तुम्हारी प्रीतिमें कभी भेद न पडैगा ॥ १२४ ॥ इसप्रकार प्रीतिपूर्वक आलाप करके उस गन्धर्वकन्याने अपनी कुचाओंका भूषण मोतियोंका हार राजपुत्रके गलेमें पहिनादिया ॥ १२५ ॥ उस अद्भुत हारको लेकर वह उसकी प्रणयसे व्याकुल होगया और बडीभारी

साहंसर्वकलाभिज्ञाज्ञातसर्वजनेंगिता ॥ तवाहमीप्सितंवेद्मिमयितेसंगतंमनः ॥ २३ ॥ तथाममापिचौत्सुक्यंदैवेनप्रतिपादितम् ॥
आवयोःस्नेहभेदोत्रनाभिभूयादितःपरम् ॥ २४ ॥ इतिसंभाष्यतेनाशुप्रेम्णागंधर्वनंदिनी ॥ मुक्ताहारंददौतस्मैस्वकुचांतरभूषणम् ॥
॥ २५ ॥ तमादायाद्भुतंहारंसतस्याःप्रणयाकुलः ॥ गाढहर्षपरासिक्तामिदमाहनृपात्मजः ॥ २६ ॥ सत्यमुक्तंत्वयाभीरुतथाप्ये
कंवदाम्यहम् ॥ त्यक्तराज्यस्यनिःस्वस्यकथंमेभवसिप्रिया ॥ २७ ॥ सात्वंपितृमतीबालाविलंघ्यपितृशासनम् ॥ स्वच्छंदाचरणंक
र्तुंमूढेत्वंकथमर्हसि ॥ २८ ॥ इतितस्यवचःश्रुत्वातंप्रत्याहशुचिस्मिता ॥ अस्तुनामतथैवाहंकरिष्येपश्यकौतुकम् ॥ २९ ॥

खुशीसे सिंचित हुई उस गन्धर्वकन्यासे यह बोला ॥ १२६ ॥ कि, हे भीरु ! तुमने सत्य कहा, तथापि मैं एक बात कहताहूँ कि, राज्यहीन और निर्धन मेरी प्रिया तुम किसप्रकार बनोगी ॥ १२७ ॥ तुम्हारे पिता है, पिताकी आज्ञाका उल्लंघन करके किसप्रकार स्वच्छन्द आचरण करसकती हो इस कार्यमें तुम मूढता करती हो ॥ १२८ ॥ इसप्रकार राजपुत्रका वचन सुन पवित्र अर्थात् सुन्दर हाथवाली वह गन्धर्वकन्या उससे बोली, जैसा तुम

कहोगे वैसाही होगा; मैं जो कौतुक करतीहूँ उसको देखो ॥ १२९ ॥ हे कांत अब तुम अपने घरको जाओ, परसों फिर इसीस्थानपर आना, एक
आवश्यक कार्य है, इसमें झूँठ मत समझना ॥ १३० ॥ इसप्रकार उससे कह और सखीजनोंको साथ लेकर सुन्दरअंगवाली वह गन्धर्वकन्या अपने
स्थानको लौट आई और वह राजपुत्रभी ॥ १३१ ॥ प्रसन्नतापूर्वक अपने मित्र ब्राह्मण पुत्रके निकट जाकर सब कहने लगा और उसके साथ अपने
घरको गया ॥ १३२ ॥ तीसरेदिन उसके बतायेहुए स्थानपर वे दोनों पहुँचे, वहां गन्धर्वकन्या समेत गन्धर्वको देखा ॥ १३३ ॥ उस गन्धर्वपतिने

गच्छस्वभवनंकांतपरश्वःप्रातरेवतु ॥ आगच्छपुनरत्रैवकार्यमस्तिचनोमृपा॥१३०॥ इत्युक्त्वातंनृपसुतंसासंगतसखीजना ॥ अपाक्रमतचार्वं
गीसचापिनृपनंदनः ॥ ३१ ॥ ससमभ्येत्यहर्षेणद्विजपुत्रस्यसन्निधिम् ॥ सर्वमाख्यायतेनैवसार्धंस्वभवनंययौ ॥ ३२ ॥ सतयापूर्वंनि
र्दिष्टंस्थानंप्राप्यनृपात्मजः ॥ गंधर्वराजमद्राक्षीत्स्वदुहित्रासमन्वितम् ॥ ३३ ॥ सगंधर्वपतिःप्रातावभिनंद्यकुमारकौ ॥ उपवेश्यासनेरम्ये
राजपुत्रमभाषत ॥ ३४ ॥ ॥ गन्धर्वउवाच ॥ राजेंद्रपुत्रपूर्वेद्युःकैलासंगतवानहम् ॥ तत्रापश्यंमहादेवंपार्वत्यासहितंप्रभुम् ॥ ३५ ॥
आहूयमांसदेवेशः सर्वेषांत्रिदिवौकसाम् ॥ सन्निधावाहभगवान्करुणामृतवारिधिः ॥ ३६ ॥ धर्मगुप्ताह्वयःकश्चिद्राजपुत्रोस्तिभूतले ॥
अकिञ्चनोभ्रष्टराज्योहतबंधुश्चशत्रुभिः ॥ ३७ ॥

आयेहुए उन दोनों कुमारोंको प्रसन्नतापूर्वक मनोहर आसनपर बिठाकर राजपुत्रसे बोला ॥ १३४ ॥ गन्धर्व बोला कि, हे राजेन्द्रपुत्र ! आजसे पहिले
दिन मैं कैलासपर्वतपर गयाथा, वहाँ पार्वतीसमेत महादेवको देखा ॥ १३५ ॥ उन करुणा और अमृतके समुद्र देवेश महादेवजीने सब देवताओंके सामने
मुझे बुलाकर कहा ॥ १३६ ॥ कि, सम्पूर्ण राज्यसे भ्रष्ट, बन्धुरहित और शत्रुओंसे हत धर्मगुप्तनामक कोई राजपुत्र पृथ्वीपर है ॥ १३७ ॥